

Classroom Study Material

विश्व इतिहास

Topic:- 1- 4

Copyright © by Vision IAS

All rights are reserved. No part of this document may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without prior permission of Vision IAS.

विषय सूची

18वीं शताब्दी से पूर्व का विश्व	6
1. सामंतवाद (Feudalism)	6
1.1. भूमिका	6
1.2. सामंतवाद का विकास क्यों हुआ?	6
1.3. सामंतवाद की विशेषताएं	6
1.3.1. मैनर	7
1.3.2. किसान	8
1.3.3. राजा और सामंत	8
1.4. निष्कर्ष	8
2. चर्च (The Church)	9
2.1. चर्च की बुराईयां	9
3. परिवर्तनशील समय	10
3.1. व्यापार, कस्बों और शहरों का उद्भव	10
3.2. उत्पादन विधि में परिवर्तन: गिल्ड (संघ)	10
3.3. व्यापारी वर्ग के प्रभाव में वृद्धि	10
3.4. पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की दिशा में संक्रमण	11
3.5. राजा व्यापारी सांठ-गांठ और किसान विद्रोह	11
4. आधुनिक युग (Modern Era)	11
4.1. पुनर्जागरण और सुधार	11
4.1.1. पुनर्जागरण	11
4.1.2. सुधार आन्दोलन (Reformation)	14
4.2. अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का आरंभ	14
4.3. निरंकुश राजतंत्रों का उदय	15
4.4. इंग्लिश रिवोल्यूशन (अंग्रेजी क्रांति)	16
5. वैश्विक सप्त वर्षीय युद्ध (1756-63)	16
5.1. भूमिका	16
5.2. युद्ध के कारण	17
5.3. परिणाम: 1763 की पेरिस संधि	17
6. अमेरिकी क्रांति (1765-1783)	17
6.1. भूमिका	17
6.2. अंग्रेजों के प्रति अमेरिका वासियों के आक्रोश के कारण	17

6.2.1. वाणिज्यिक पूंजीवाद	18
6.2.2. 1763 की घोषणा	18
6.2.3. प्रबुद्ध विचारकों की भूमिका	19
6.2.4. युद्ध (सप्त वर्षीय) व्यय की पुनर्प्राप्ति	20
6.2.5. ब्रिटिश संसद में कोई प्रतिनिधित्व नहीं	20
6.2.6. 1774 का कोएर्सिव एक्ट और फिलाडेल्फिया कांग्रेस	21
6.3. अमेरिकी क्रांति युद्ध या अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम (1775)	22
6.3.1. 1783 की द्वितीय पेरिस संधि	22
6.3.2. अमेरिकी क्रांति की समालोचना	23
7. फ्रांसीसी क्रांति और नेपोलियन के युद्ध	24
7.1. फ्रांसीसी क्रांति के पीछे निहित कारण	24
7.1.1. तीन एस्टेट्स	24
7.1.2. अलोकप्रिय राजतंत्र और वित्तीय कठिनाइयाँ	25
7.1.3. प्रबुद्ध विचारकों की भूमिका	25
7.2. 1789 की फ्रांसीसी क्रांति की घटनाएँ	26
7.2.1. जैकोबिन और नेपोलियन	28
7.3. फ्रांसीसी क्रांति के प्रभाव/रचनात्मक आलोचना	29
7.3.1. पक्ष	29
7.3.2. विपक्ष	30
8. राष्ट्रवाद - उदय और प्रभाव	30
8.1. राष्ट्र की संकल्पना	30
8.2. निरंकुश राजाओं द्वारा दुरुपयोग	31
8.3. क्रांतिकारी विचारकों की भूमिका	31
8.4. औद्योगिक क्रांति और राष्ट्रवाद	31
9. जर्मनी और इटली का एकीकरण	31
9.1. जर्मनी का एकीकरण	32
9.1.1. सामाजिक और आर्थिक स्थिति	32
9.1.2. नेपोलियन के युद्धों और फ्रांसीसी क्रांति की भूमिका	32
9.1.3. लोकतंत्र के अधीन एकजुट करने में विफलता	33
9.1.4. बिस्मार्क के नेतृत्व में एकीकरण: रक्त और लौह की नीति	33
9.2. इटली का एकीकरण	34
9.2.1. 1848 के विद्रोहों की भूमिका	34
9.2.2. प्रधान मंत्री कावूर की बिस्मार्क सदृश नीति के माध्यम से एकीकरण	34
10. औद्योगिक क्रांति	36
10.1. औद्योगिक क्रांति से पहले वस्तुओं के उत्पादन की विधि	36

10.1.1. पुटिंग-आउट प्रणाली	36
10.1.2. कारखाना प्रणाली	36
10.2. औद्योगिक क्रांति क्या है?	36
10.3. इंग्लैंड में ही सर्वप्रथम औद्योगिक क्रांति क्यों?	36
10.4. औद्योगिक क्रांति के घटक	37
10.4.1. वस्त्र क्षेत्रक में क्रांति	37
10.4.2. वाष्प शक्ति/स्टीम पावर	38
10.4.3. लोहे के उत्पादन में क्रांति	39
10.4.4. परिवहन एवं संचार में क्रांति	39
10.4.5. कृषि क्रांति	40
10.5. औद्योगिक क्रांति का प्रभाव	40
10.6. इंग्लैंड के बाहर औद्योगिक क्रांति का प्रसार	42
11. उपनिवेशवाद की परिभाषा	43
12. उपनिवेशवाद का इतिहास	43
12.1 भौगोलिक खोज या अन्वेषण की भूमिका	43
12.2. तकनीकी नवोन्मेष	45
13. औपनिवेशीकरण (Colonization)	46
14. उपनिवेशवाद का प्रभाव	47
15. उपनिवेशवाद और वाणिज्यिक पूंजीवाद में संबंध	48
16. उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद के बीच अंतर	48
17. नव साम्राज्यवाद (New Imperialism) की परिभाषा	49
18. नव साम्राज्यवाद का इतिहास	50
19. अफ्रीका में उपनिवेशवाद	52
19.1. अफ्रीका के लिए फ्रांसीसी संघर्ष	54
19.2. अफ्रीका के लिए ब्रिटिश संघर्ष	55
19.3. अफ्रीका के लिए जर्मनी का संघर्ष	55
19.4. अफ्रीका के लिए इटली का संघर्ष	55
19.5. अफ्रीका पर उपनिवेशवाद के प्रभाव	56
19.5.1. औपनिवेशिक श्वेत लोग कुलीन बन गए और उन्होंने देशी अश्वेतों का शोषण किया	56
19.5.2. दासप्रथा	56
19.5.3. औपनिवेशिक शक्तियों द्वारा जनसंहार	57
19.5.4. बांटो और राज करो की नीति से स्वतंत्रता पश्चात् समस्याएं	57
19.5.5. शिक्षा और स्वास्थ्य की अत्यधिक उपेक्षा	57

19.5.6. आर्थिक विकास की क्षति	58
20. प्रशांत महासागर क्षेत्र में उपनिवेशवाद	58
21. मध्य और पश्चिमी एशिया में उपनिवेशवाद	59
22. चीन में साम्राज्यवाद	60
22.1. चीन की घटनाओं का विवरण	61
22.2. प्रथम एवं द्वितीय अफीम युद्ध (1840-42 और 1858)	61
22.2.1. 1858 में अमूर नदी के उत्तर का क्षेत्र रूस को सौंपना पड़ा	62
22.2.2. मांचू राजवंश और वॉरलॉर्ड युग	62
22.2.3. पांच प्रमुख घटनाएँ	63
22.2.4. प्रथम विश्व युद्ध (1914-19)	64
22.2.5. वॉरलॉर्ड्स युग (1916-28)	64
22.2.6. 4 मई का आंदोलन (1919)	64
22.2.7. कोमिन्तांग और सन यात सेन	65
22.2.8. च्यांग काई शेक	65
22.2.9. चीनी कम्युनिस्ट पार्टी (1921 के बाद)	65
23. साम्राज्यवादी जापान	67
24. साम्राज्यवादी संयुक्त राज्य अमेरिका	70

18वीं शताब्दी से पूर्व का विश्व



18वीं एवं 19वीं शताब्दी की घटनाओं को समझने के लिए 18वीं शताब्दी से पूर्व की घटनाओं को समझना आवश्यक है। 18वीं शताब्दी के प्रारंभ की कुछ प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार थीं:

- इंग्लैंड में सामंतवाद का अंत (यूरोप के शेष भागों में सामंतवाद का अंत बहुत बाद में हुआ)।
- शहरों और कस्बों की संख्या में वृद्धि।
- व्यापार में वृद्धि।
- भूमि आधारित अर्थव्यवस्था (सामंतवाद) का मुद्रा आधारित अर्थव्यवस्था में संक्रमण।
- व्यापारी वर्ग और निरंकुश सम्राटों का उदय (*इंग्लैंड में आंशिक लोकतंत्र था और 1688 की गौरवपूर्ण क्रांति के बाद, राजशाही की वजाय संसद की सर्वोच्चता थी)। कैथोलिक चर्च की शक्ति में हास हुआ।
- वाणिज्यिक पूंजीवाद का उदय।
- इंग्लैंड और फ्रांस की प्रतिद्वंद्विता चरम पर।

1. सामंतवाद (Feudalism)

1.1. भूमिका

- 600 ई. से 1500 ई. तक की अवधि को यूरोपीय इतिहास में मध्य युग या मध्यकाल की संज्ञा दी गयी है। विशेष रूप से पश्चिमी यूरोप में इस अवधि के दौरान कई सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन हुए। मध्यकाल के दौरान पश्चिमी यूरोप में ऐसी सामाजिक व्यवस्था विकसित हुई जो शेष विश्व से बहुत भिन्न थी। इसे 'सामंतवाद' के नाम से जाना जाता है।
- सामंतवाद शब्द 'feud' शब्द से निकला है, जिसका अर्थ 'भूमि का सशर्त स्वामित्व' होता है। सामंतवाद ऐसी नई सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था थी जो मध्यकाल (600-1500 ईस्वी) में पश्चिमी यूरोप में तथा आगे चलकर यूरोप के अन्य भागों में प्रचलित हुई।
- इसके अंतर्गत, समाज में वर्गों का विभाजन कठोर था, राजनीतिक रूप से देखें तो यहाँ कोई केंद्रीय शक्ति नहीं थी और ग्राम आधारित अर्थव्यवस्था का प्रचलन था। इस प्रकार ग्राम आधारित अर्थव्यवस्था वस्तुतः आत्मनिर्भर थी और अधिशेष उत्पादन बहुत कम था जिससे व्यापार की संभावना न्यून हो गयी थी। अतः व्यापार एवं शहरों के पतन को इसकी एक विशेषता के रूप में देखा गया है।
- सामंतवाद के अंतर्गत केंद्रीय राजनीतिक शक्ति के अभाव के कारण बहुत सारे सामंतों का राजनीतिक वर्चस्व कायम था जो राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक मामलों को नियंत्रित करते थे। इस समय राजा बहुत शक्तिशाली नहीं था। सामंत किसानों का शोषण करते थे और 'सर्फडम' सामंतवाद की महत्वपूर्ण विशेषता बन गई थी। इसके अतिरिक्त, यूरोप में चर्च का प्रभाव धार्मिक मामलों से परे भी विस्तृत था।

1.2. सामंतवाद का विकास क्यों हुआ?

- पश्चिमी यूरोप में केंद्रीय राजनीतिक शक्ति के अभाव के कारण सामंतवाद का विकास हुआ क्योंकि इस समय पश्चिमी यूरोप कई छोटे और बड़े राज्यों में बिखर गया था। ऐसी व्यवस्था में स्थानीय सामंत राजा की तुलना में अधिक शक्तिशाली हो गए और सामाजिक मामलों को नियंत्रित करने लगे।

1.3. सामंतवाद की विशेषताएं

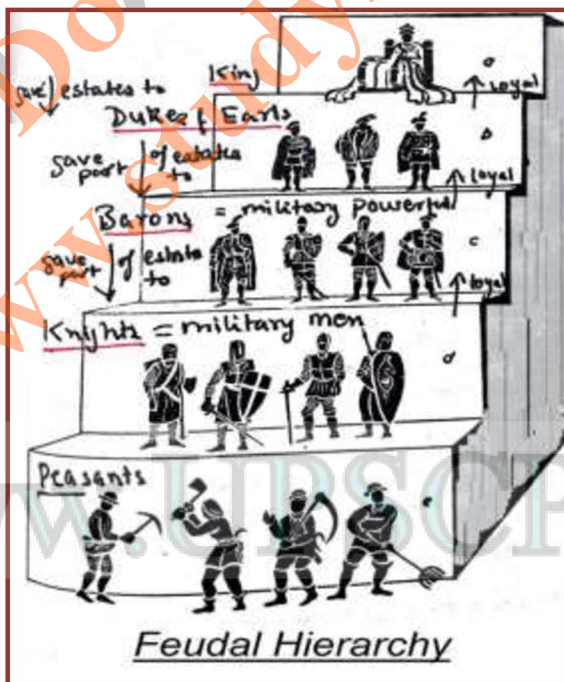
- सामंती व्यवस्था में अर्थव्यवस्था ग्राम आधारित थी और ये ग्राम आत्मनिर्भर थे। इस अवधि के दौरान कस्बों के साथ व्यापार में गिरावट आई। शक्ति का मुख्य स्रोत भूमि थी, न कि मुद्रा।

1.3.1. मैनर



- किसान सामंत की भूमि पर काम करते थे, जिसे कई जागीरों या मैनरों में संगठित किया गया था। प्रत्येक मैनर में एक गढ़ (सामंत का घर), किसानों के लिए काम करने हेतु खेत, किसानों के रहने के लिए घर, किसानों के लिए गैर-कृषि वस्तुओं का उत्पादन करने हेतु कार्यशालाएं और लकड़हारों हेतु लकड़ी काटने के लिए साझा जंगल होते थे। मैनर में जो भी उत्पादन होता था, उसका सामंत और निवासियों द्वारा उपभोग किया जाता था, जबकि इसमें से बहुत कम वस्तुओं का व्यापार किया जाता था।
- मैनर के श्रमिकों में **सर्फ** और **काश्तकार किसान** सम्मिलित थे। खेत छोटे छोटे भू-खंडों में विभाजित थे। हालांकि भूमि का कुछ भाग काश्तकारों को दिया गया था, जो सामंत को कर के रूप में उपज के एक हिस्से का भुगतान करते थे, शेष भूमि सामंत के अधीन होती थी।

सामाजिक और आर्थिक प्रणाली:





1.3.2. किसान

इस काल में किसान निम्नलिखित में वर्गीकृत थे:

- **सर्फ (Serfs):** सर्फ सामन्त की भूमि पर निःशुल्क काम करते थे और उसकी इच्छानुसार इन्हें सभी कार्य करने पड़ते थे। वे स्वतंत्र नहीं थे और भूमि से बंधे थे। इसका अर्थ यह था कि भूमि स्वामित्व में परिवर्तन होने के साथ ही सर्फ का स्वामी भी परिवर्तित होकर एक सामंत से दूसरा सामंत हो जाता था। इस प्रणाली को **सर्फडम** के नाम से जाना जाता था।
- **स्वतंत्र भू-धारक (Freeholders):** इन्हें सामंत से अपनी भूमि मिलती थी। ये स्वतंत्र होते थे और केवल सामंत द्वारा निर्धारित कर का भुगतान करते थे।
- **कृषिदास या छोटे पट्टेदार (Villeins):** इन्हें भी अपनी भूमि सामंत से मिलती थी। कुछ निश्चित दिन ये सामंत के लिए काम करते थे, अन्यथा ये स्वतंत्र होते थे और अपनी कृषि उपज के एक भाग के रूप में कर का भुगतान करते थे।
- **स्वतंत्र व्यक्ति (Freemen):** ये ऐसे सर्फ थे जिन्हें उनके सामंत द्वारा अपने विवेकाधिकार से मुक्त किया गया होता था।

1.3.3. राजा और सामंत

- सामंती पदानुक्रम में शीर्ष पर राजा होता था। राजा के नीचे सामंत लोग भी अधिपति सामंत और अधीनस्थ सामंतों के पदानुक्रम में व्यवस्थित होते थे। प्रत्येक सामंत केवल अपने अधिपति के मातहत भूमिधर होता था। मातहत होने का अर्थ निष्ठा रखना या निष्ठावान होना होता था, जिसके बदले में उसे कुछ औपचारिक अधिकार मिलते थे। यह पदानुक्रमित प्रणाली अलंघनीय थी क्योंकि अधीनस्थ सामंत केवल अपने तात्कालिक अधिपति के आदेशों का पालन करता था, न कि पदानुक्रम में और ऊंचे सामंतों का। इस प्रकार दोहरे कमान की एक ऐसी व्यवस्था विकसित हुई जिसमें केवल दो क्रमागत स्तरों के मध्य ही विभिन्न प्रकार के संबंध विकसित हुए। राजा केवल ड्यूक और अर्ल को आदेश दे सकता था, जो अपने अधीनस्थ सामंतों को आदेश देते थे। ड्यूक और अर्ल को बैरन से सैन्य सहायता मिलती थी, जो सैन्य जनरलों की भांति होते थे, जो आगे नाइट्स पर निर्भर होते थे जो वास्तविक योद्धा होते थे।
- इसके अतिरिक्त, स्वयं कोई भी सामंत अपने अधीन भूमि का प्रत्यक्ष स्वामी नहीं होता था। वह अपने अधिपति के नाम पर भूमि रखता था। इस प्रकार कानूनी रूप से, सभी प्रदेश राजा के अधीन थे। केवल राजा को सामंत के बेटे को नाइट की पदवी देने का अधिकार होता था, जो तब अपने नाम के साथ 'सर' जोड़ सकता था।
- प्रत्येक सामंत के पास अपने सैनिक होते थे और वह अपनी जागीर का एकमात्र अधिकारी होता था। इस प्रकार कार्यात्मक शब्दों में कोई केंद्रीय शक्ति नहीं थी और राजा केवल कानूनी अर्थों में केंद्रीय शक्ति था। परिणामस्वरूप इस समय राजनीतिक एकता की बहुत कमी थी।
- धीरे-धीरे, यह पदानुक्रम वंशानुगत हो गया। सामंत के पुत्र अगले सामंत बन जाते थे और उनके पिता की जागीर उनकी जागीर बन जाती थी।

1.4. निष्कर्ष

- यह बिल्कुल स्पष्ट है कि सामंती समाज में वर्गों का विभाजन कठोर था जिसमें सामाजिक गतिशीलता के लिए कोई गुंजाइश नहीं थी। राजा के पास कोई वास्तविक अधिकार नहीं था और शक्तिशाली सामंत जनता (जिनमें से अधिकांश लोग किसान थे) के कल्याण के लिए नहीं सोचते थे। अधिकांश उपज सामंतों द्वारा विलासितापूर्ण जीवन जीने में बर्बाद कर दी जाती थी, इस कारण समाज में आर्थिक जड़ता आ गई थी। किसानों के लिए गतिविधियों की कोई स्वतंत्रता नहीं थी क्योंकि वे भूमि से बंधे थे और व्यक्तिगत उद्यमिता की तो कोई सम्भावना ही नहीं थी।

2. चर्च (The Church)



- रोमन कैथोलिक चर्च भी सामंतवादी संस्था जितना ही शक्तिशाली था। जब यूरोप के शासकों ने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया तो चर्च का नेतृत्व करने वाला पोप, पश्चिमी यूरोप के ईसाई जगत का प्रमुख बन बैठा। छठी सदी से पोप प्रायः राजा की तुलना में अधिक शक्ति रखता था और उससे अपने आदेशों का पालन करवा सकता था। प्रारंभ में, ईसाई चर्च (वह स्थान जहां पादरी रहते थे) उच्च शिक्षा संस्थान थे। पादरी लोगों के नैतिक जीवन और गरीबों के कल्याण के लिए काम करते थे। लेकिन शीघ्र ही चर्च में भ्रष्टाचार फैल गया।

2.1. चर्च की बुराईयां

- शासनकला पर चीनी नियम पुस्तिका, *ताओ ते चिंग* में दो हजार चार सौ वर्ष पहले उपदेश दिया गया था: "प्राचीन लोगों की परिपाटी ऐसी थी जिससे लोगों का ज्ञानवर्धन नहीं हुआ; इससे घृणा करने की वजाय वे इसका उपयोग करते थे; क्योंकि जनता पर शासन करना तब कठिन होता है जब उनके पास बहुत अधिक ज्ञान होता है। इसलिए, ज्ञान के माध्यम से राज्य पर शासन करना राज्य को दृढ़ बना देना है। अज्ञानता के माध्यम से राज्य पर शासन करने से राज्य में स्थिरता आती है।" चर्च ने अपना शिकंजा बनाए रखने में इसी सिद्धांत का उपयोग किया। इसके साथ ही, जैसा कि हम बाद में देखेंगे, लोगों के प्रबोधन या ज्ञानवर्धन की यह शक्ति, अमेरिका और फ्रांस की क्रांतियों को विचारों की क्रांति बनाने में बहुत अधिक महत्वपूर्ण थी।

मध्य युग में (600 ईस्वी से 1500 ईस्वी) चर्च में निम्नलिखित बुराईयों का समावेश हुआ :

- चर्च के पदों के लिए धन।
- प्रत्येक अनुष्ठान के लिए धन।
- पाप धुलने के लिए धन। उदाहरण के लिए, चर्च ने "क्षमा पत्र" बेचना आरंभ कर दिया, जिसे खरीदने पर पाप धुलने के लिए तीर्थयात्रा करने की आवश्यकता नहीं रह जाती थी।
- पोप, नन, विशेष इत्यादि भ्रष्ट हो गए और राजाओं की तरह जीवन जीने लगे।
- चर्च के पास विशाल संपत्ति का स्वामित्व था।
- स्थिति में सुधार करने के लिए, चर्च से जुड़े कुछ लोगों ने घुमन्तू पादरियों को प्रचलित किया। इन पादरियों का घर-बार नहीं होता था और ये आत्म-त्याग और शुद्धता का उदाहरण स्थापित करते हुए आम जनता के बीच यात्रा करते थे। लेकिन शीघ्र ही, वे भी भ्रष्ट हो गए। उदाहरण के लिए, वे किसी भी विवाह को प्रमाणित कर देते थे और धन के लिए सभी पाप धो देते थे।
- मध्यकाल में शिक्षा प्रदान करने वाला एकमात्र संस्थान चर्च था। भविष्य में पादरी बनकर ही इस शिक्षा का उपयोग किया जा सकता था। शिक्षा का माध्यम लैटिन होता था जो आम-जन की भाषा नहीं थी।
- चर्च ने "वर्ष में एक बार" पादरी के सामने पापों की स्वीकृति को अनिवार्य बना दिया था और इस नियम के उल्लंघन पर दण्ड का प्रावधान था।
- तर्क, विवेक और विज्ञान को हतोत्साहित किया जाता था। विज्ञान और इतिहास के विषयों की कोई शिक्षा उपलब्ध नहीं थी। यही कारण है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी में आगे चलकर होने वाला विकास वैज्ञानिक क्रांति के रूप में संदर्भित किया जाता है।
- अंधविश्वास और जादू-टोने पर लोग बहुत अधिक विश्वास करते थे। चर्च हिंसक हो गया था। इसने उन लोगों को जलाने का आदेश दिया, जो परमेश्वर, धर्म और यहां तक कि भौतिक घटनाओं के संबंध में उसके विचारों का विरोध करते थे। ऐसा "अपधर्म" के आरोप पर किया जाता था। चर्च द्वारा प्रचारित परमेश्वर का महिमामंडन करने वाले सिद्धांतों (जैसे पृथ्वी सपाट है, या सम्पूर्ण ब्रह्मांड पृथ्वी के चारों ओर घूमता है) का खंडन करने वाले वैज्ञानिक सिद्धांतों को प्रतिपादित करने वाले कई वैज्ञानिकों को चर्च के कोप का शिकार होना पड़ा। डायन के रूप में और बुरी आत्माओं से ग्रस्त होने के रूप में पहचाने जाने के बाद उनमें से कइयों को जला दिया जाता था।

3. परिवर्तनशील समय



3.1. व्यापार, कस्बों और शहरों का उद्भव

- 7वीं सदी में हुए धर्मयुद्धों से यूरोप अरब देशों के संपर्क में आया। इससे यूरोप का परिचय समृद्ध अरब सभ्यता और उसकी विलासितापूर्ण सामाग्रियों से हुआ। परिणामस्वरूप सामंत स्वामियों के मध्य पूर्व की विलासितापूर्ण वस्तुओं की मांग बढ़ने लगी। इसके साथ ही उत्पादन के तरीकों में सुधार के कारण कृषि उत्पादकता में वृद्धि से भी किसानों के लिए गैर-कृषि वस्तुओं का खरीदार बनना संभव हुआ। इन कारकों से पूर्व के साथ व्यापार में वृद्धि हुई है। शिल्प और कस्बों (जहां शिल्प सामाग्रियाँ तैयार की जाती थीं) का भी महत्व बढ़ने लगा। विशेषकर 11वीं शताब्दी के बाद की अवधि में शहरों, व्यापार और शिल्प का तेजी से उदय हुआ।
- धीरे-धीरे, किसानों ने कारीगरों (अर्थात् शिल्पकारों) के रूप में काम करना आरंभ कर दिया और इन नए शहरों में व्यापारी आकर बसने लगे। जैसे-जैसे कस्बों में कारीगरों की संख्या में वृद्धि हुई वैसे-वैसे ये कस्बे विस्तृत होकर शहर बनने लगे। सम्पूर्ण यूरोप में, मुख्य रूप से भूमि आधारित व्यापारिक मार्गों या समुद्री बंदरगाहों के आसपास इन शहरों का विकास हुआ। बंदरगाहों से, एशिया से आयातित वस्तुएं भू-मार्गों के द्वारा यूरोप की मुख्य भूमि तक पहुँचाई जाने लगीं। अपनी अवस्थिति और अच्छे प्राकृतिक बंदरगाह होने के भौगोलिक लाभ के कारण इटली में शहरों का अधिकतम विकास हुआ (जैसे कि वेनिस और जेनोवा जैसे समुद्री-बंदरगाह शहर), जो पूर्व के साथ व्यापार की सुविधा देते थे। यूरोप में इस समय विकसित होने वाले समुद्री-बंदरगाह तथा व्यापार और वाणिज्य के अंतर्देशीय केंद्र अभी भी यहाँ के समृद्ध शहर हैं।

3.2. उत्पादन विधि में परिवर्तन: गिल्ड (संघ)

- बढ़ते व्यापार और कस्बों के साथ-साथ शिल्प में विशेषीकरण के कारण पैदा हुई मांग को पूरा करने के लिए, वस्तुओं के उत्पादन की पद्धति में परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की गई। कस्बों के व्यापारियों और कारीगरों ने स्वयं को गिल्डों में संगठित करना आरंभ कर दिया, जो उत्पादित की जा रही वस्तुओं के लिए विशिष्ट होते थे, उदाहरण के लिए सुनार, नाई, चमड़ा श्रमिकों के गिल्ड आदि। गिल्ड प्रणाली के अंतर्गत एक प्रमुख शिल्पकार होता था, जिसके अंतर्गत तीन से चार कर्मचारी या प्रशिक्षु काम करते थे।

3.3. व्यापारी वर्ग के प्रभाव में वृद्धि

- व्यापार के पुनरुद्धार और शहरों के उद्भव के परिणामस्वरूप मध्यम वर्ग नामक एक नए वर्ग का उदय हुआ, जिसमें मुख्य रूप से व्यापारी सम्मिलित थे। धीरे-धीरे शहरों ने सामंती नियंत्रण से स्वयं को मुक्त कर लिया। उनकी अपनी सरकार, जनसेना और न्यायालय थे। ये लोग भूमि से नहीं बंधे थे, उनके पास व्यवसाय की स्वतंत्रता थी और ये स्वतंत्रतापूर्वक चारों ओर आ-जा सकते थे। इन शहरों द्वारा प्रदान की जाने वाली सामाजिक गतिशीलता ने गांवों से किसानों को भी आकर्षित किया।
- सर्फ शहरों में स्वतंत्र थे और वे व्यापारियों के लिए आवश्यक श्रमबल प्रदान करते थे। अधिक संख्या में किसानों के आगमन ने शहरों में उत्पादित वस्तुओं के लिए घरेलू बाजार प्रदान किया। शहरों की अर्थव्यवस्था मुद्रा-आधारित थी और भूमि सत्ता का मुख्य स्रोत नहीं थी। स्वामी सामंत को अब श्रम के बजाय नकद में भुगतान किया जाता था। व्यापार से होने वाले लाभ में वृद्धि के कारण व्यापारियों के प्रभाव में वृद्धि हुई। पूर्व के साथ व्यापार से ऐसी वस्तुएँ आईं, जो पूरी तरह से यूरोप के लोगों के लिए नई थीं। इसके अतिरिक्त, ऐसी वस्तुओं की मांग बढ़ी, क्योंकि वे जनता के बीच लोकप्रिय होने लगी थीं। धीरे-धीरे, व्यापारियों ने शहरों में न केवल सामाजिक और आर्थिक, बल्कि राजनीतिक जीवन को भी प्रभावित करना आरंभ कर दिया।



3.4. पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की दिशा में संक्रमण

- शहरों में नकदी आधारित आर्थिक प्रणाली प्रचलित हुई। यहां जीवन भूमि की बजाय धन के चारों ओर घूमता था। भूमि का उपयोग नकदी फसलों के उत्पादन के लिए किया जाता था, जो गैर-कृषि वस्तुओं के निर्माण के लिए कच्चे माल के रूप में काम करती थी और कस्बों के किसानों को नकद में भुगतान मिलता था। सोने और चांदी के बजाय मुद्रा धनसंपत्ति का प्रतीक हो गई। सोने और चांदी के रूप में बेकार पड़ी धनसंपत्ति के विपरीत मुद्रा के रूप में मुनाफे का व्यापार होता था और इसे उद्योग में पुनः निवेश किया जा सकता था। ऐसी धनसंपत्ति या मुद्रा को 'पूँजी' कहा जाता है। गांवों के स्थान पर शहर उत्पादन का केंद्र बन गए।

3.5. राजा व्यापारी सांठ-गांठ और किसान विद्रोह

- राजा और व्यापारियों के बीच गठजोड़ में वृद्धि हुई क्योंकि दोनों ही राजनीतिक और आर्थिक शक्ति की आकांक्षा करते थे। जहां राजा सामंती स्वामियों पर निर्भरता से छुटकारा पाना चाहते थे और चर्च के कम हस्तक्षेप की आकांक्षा रखते थे, वहीं व्यापारी व्यापार और वाणिज्य के माध्यम से प्राप्त मौद्रिक लाभ द्वारा अपनी सामाजिक स्थिति की स्वतंत्रता का उपभोग करना चाहते थे।
- मध्य युग (600 ईस्वी से 1500 ईस्वी) के दौरान 14वीं शताब्दी में सामंती संस्थाओं के साथ ही चर्च के विरुद्ध भी कई किसान विद्रोह हुए। कई बार विद्रोही किसान नेताओं ने ऐसे धार्मिक सिद्धांतों का प्रचार किया, जो चर्च से भिन्न था। इस प्रकार, इन सभी घटनाक्रमों के कारण सामंती व्यवस्था का पतन होने लगा, हालांकि यह पूरी तरह से 19वीं शताब्दी तक ही समाप्त हो पाया।

4. आधुनिक युग (Modern Era)

- मध्य युग के अंत तक सामंतवादी व्यवस्था बिखरने लगी थी और आधुनिक युग में यह बिखराव और तीव्र हो गया। 14वीं से 17वीं शताब्दी तक पुनर्जागरण और सुधार जैसी कुछ महत्वपूर्ण घटनाएँ हुईं, जिसके परिणामस्वरूप सामंती व्यवस्था का अंत हो गया।

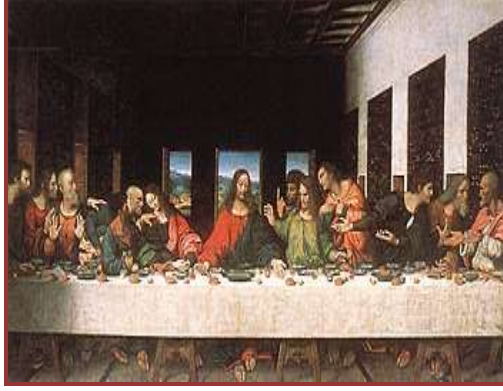
4.1. पुनर्जागरण और सुधार

4.1.1. पुनर्जागरण

पुनर्जागरण शब्द का अर्थ है 'फिर से जागना'। पुनर्जागरण लगभग 14वीं शताब्दी से आरंभ होकर 17वीं शताब्दी तक चला। इसका आरंभ इटली में हुआ क्योंकि व्यापार ने इटली के शहरों में समृद्धि लाई थी, जोकि सामंती नियंत्रण से स्वतंत्र थी (अपनी विशेष भौगोलिक स्थिति के कारण इटली विदेशी व्यापार का केंद्र था। 15वीं शताब्दी के अंत में खोजी समुद्री यात्राओं के बाद पुर्तगाल और स्पेन और बाद में हॉलैंड, फ्रांस और ब्रिटेन ने व्यापार पर हावी होना आरंभ किया)। बाद में, पुनर्जागरण का विचार इटली से बाकी यूरोप तक फैल गया।

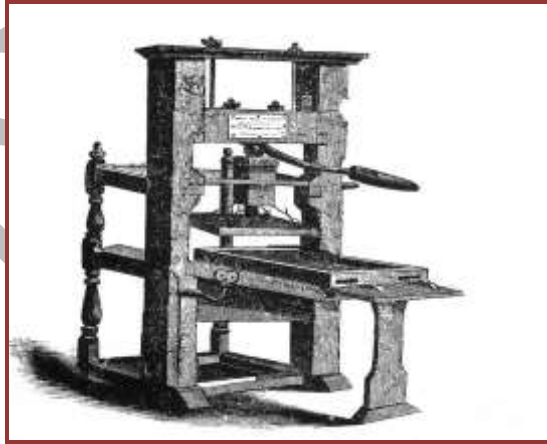
- यह प्राचीन साहित्य के पुनः अध्ययन और प्राचीन ग्रीस और रोम के बारे में जानने के लिए एक आंदोलन के रूप में आरंभ हुआ। लेकिन जल्द ही यह कला, धर्म, साहित्य, दर्शन, विज्ञान और राजनीति में नए विचारों के आन्दोलन में बदल गया। इसके परिणामस्वरूप यूरोप के बौद्धिक और सांस्कृतिक जीवन में चर्च के प्रभाव में गिरावट आई। चर्च मृत्योपरांत जीवन में शांति के बारे में बात करता था, जबकि पुनर्जागरण के विचारकों ने इस धरती पर प्रसन्नता की बात की और चर्च के विचारों पर हमला किया।
- मानववाद पुनर्जागरण की प्रमुख विशेषता थी। मानववाद का अर्थ है - मानव जीवन में रूचि लेना, मानव की समस्याओं का अध्ययन करना, मानव का आदर करना, मानव जीवन के महत्त्व को स्वीकार करना तथा उसके जीवन को सुधारने और समृद्ध एवं उन्नत बनाने का प्रयास करना। इसका अर्थ है ईश्वरत्व के बजाय मानवता पर ध्यान केंद्रित करना। पुनर्जागरण ने धर्मशास्त्र के बजाय मनुष्य और प्रकृति को अध्ययन का केन्द्र बनाया। पार-लौकिक मामलों की चिंता का परित्याग कर दिया गया और उनका ध्यान जीवित व्यक्ति, उनके सुख-दुःख पर था। पुनर्जागरण एक नई मानवतावादी और तर्कसंगत सोच वाले विचार के रूप में आया जिसमें अंधविश्वास का कोई स्थान नहीं था। मनुष्य की क्षमता,

उसकी गरिमा और उसके अधिकारों पर बल दिया गया। धीरे-धीरे, कला और संस्कृति की विषयवस्तु भी मनुष्य और प्रकृति से संबंधित हो गई। जैसे मेरी और यीशु को धार्मिक प्रतीकों के बजाय मनुष्य के रूप में चित्रित किया गया। दा विंसी, माइकल एंजेलो और राफेल जैसे कलाकार पुनर्जागरण आंदोलन के प्रमुख कलाकार थे। चर्चों में चित्रों का विषय स्वर्ग और नरक से मानवीय रूपों में स्थानांतरित हो गया।



चित्र: द लास्ट सपर- विंची

- इस प्रकार, मानवतावाद नियतिवाद के विरुद्ध था। पुनर्जागरण के प्रभाव का पता पश्चिम के वर्तमान व्यक्तिवादी समाजों को देखकर लगाया जा सकता है, जिसके अंतर्गत अपने जीवन को स्वयं बदलने की क्षमता में विश्वास अभी भी किसी व्यक्ति के मूल्य प्रणाली का एक महत्वपूर्ण अंग है।
- पुनर्जागरण के कारण साहित्य में, लैटिन और यूनानी भाषाओं के स्थान पर स्थानीय यूरोपीय भाषाओं की प्रगति हुई। इस प्रकार पुनर्जागरण ने भाषाई विकास और इसके माध्यम से राष्ट्रीय चेतना के विकास में सहायता की। **द प्रिंस** में, **मैक्यावली** ने राज्य की एक नई अवधारणा दी जिसके अनुसार राज्य धर्म से ऊपर था और इसमें राजनीतिक मामलों के सर्वोच्च अधिकार निहित थे। राजनीतिक मामलों को धर्म से अलग माना जाने लगा। इस प्रकार **धर्मनिरपेक्षता को पुनर्जागरण से जोड़ा जा सकता है।**
- 15वीं शताब्दी के पहले 50 वर्षों में प्रिंटिंग प्रेस (छपाई खाना) के आविष्कार ने शिक्षा और नए विचारों का प्रसार किया। हालांकि, इसने अशिक्षित गरीबों को कम प्रभावित किया।

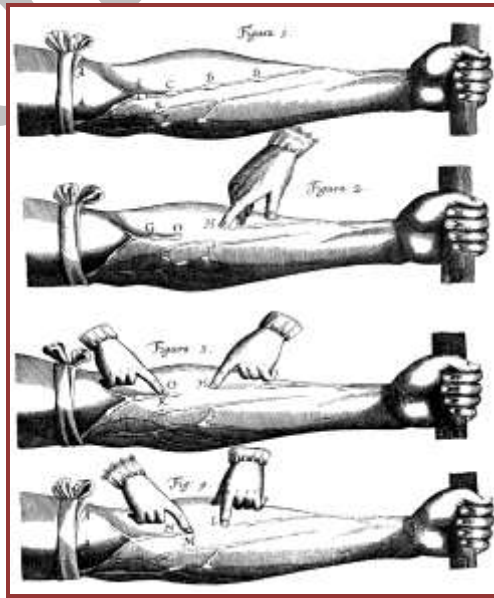
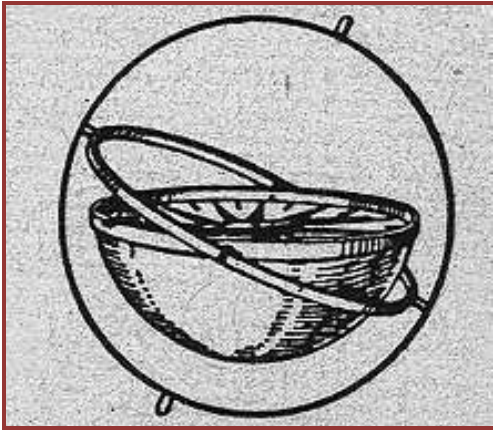


चित्र: प्रिंटिंग प्रेस - जोहांस गुटेनबर्ग

- वैज्ञानिक क्रांति भी इस परिवर्तन का एक उत्पाद था। इसका आरंभ पुनर्जागरण काल के अंत (यानी लगभग 17वीं सदी) में हुआ और 18वीं शताब्दी के अंत तक जारी रहा। भौतिक घटनाओं पर चर्च के दृष्टिकोण को त्याग दिया गया। केवल उन परिघटनाओं को स्वीकार किया गया जिन्हें वैज्ञानिक अवलोकन के तरीकों से समझाया और सत्यापित किया जा सकता था। इस प्रकार प्रयोगों के माध्यम से किसी परिकल्पना के परीक्षण पर ध्यान केंद्रित किया जाने लगा। कॉपरनिकस ने पाया कि पृथ्वी अपनी अक्ष पर घूमती है और साथ ही उसने पृथ्वी के परिक्रमण का हेलीओ-सेंट्रिक (सूर्य-केंद्रित) सिद्धांत प्रस्तुत किया अर्थात् पृथ्वी सूरज के चारों ओर घूमती है {यह चर्च के विचार कि पृथ्वी ब्रह्मांड का केंद्र थी, जिसे जियो-सेंट्रिक (पृथ्वी-केन्द्रित) सिद्धांत भी कहा जाता है, उसके विरुद्ध था}। चर्च ने उसे विधर्मी या धर्म विरुद्ध होने के लिए दंडित किया। उसका साथ देने वाले ब्रूनों को जला कर मार दिया गया। गैलीलियो

ने सन् 1554 में टेलीस्कोप का आविष्कार किया और आकाशीय पिंडों का अध्ययन करने के लिए इसका उपयोग किया। उसने कॉपरनिकस के अवलोकन की पुष्टि की और सिद्ध किया कि ब्रह्मांड एक खुली प्रणाली या व्यवस्था है (चर्च का कहना था कि ब्रह्मांड एक बंद प्रणाली है और इसे भगवान द्वारा गतिमान रखा गया है) और पृथ्वी इसका एक छोटा-सा हिस्सा है। गैलीलियो पर भी विधर्मी होने का आरोप लगाया गया और उसे आगे खगोल विज्ञान पर काम करने की अनुमति नहीं दी गई। जर्मनी के केप्लर ने गणित की मदद से यह समझाया कि ग्रह कैसे सूर्य के चारों ओर घूमते हैं। न्यूटन ने केप्लर के काम को जारी रखा और सिद्ध किया कि सभी आकाशीय पिंड गुरुत्वाकर्षण के नियम के अनुसार गति करते हैं।

मानव शरीर के विच्छेदन के अध्ययन के माध्यम से वेसेलियस ने मानव शरीर की शारीरिक रचना का पूरा विवरण प्रदान किया। 1628 में हार्वे ने रक्त परिसंचरण समझाया। इसने चिकित्सा विज्ञान में मदद की। यंत्रों एवं नए प्रकार के कम्पास के आविष्कार और उन्नत जहाजों के विकास ने 15वीं शताब्दी के अंत में नई भूमियों की खोज में सहायता की। ये जहाज चाहे हवा की दिशा कुछ भी हो, किसी भी दिशा में चल सकते थे। वैज्ञानिक क्रांति ने 17वीं शताब्दी के मध्य में आरंभ हुए एक नये आंदोलन "प्रबोधन" के लिए मार्ग प्रशस्त किया जोकि 18वीं शताब्दी के मध्य में अपने चरम पर पहुंच गया।



चित्र : 1- कम्पास, 2- गैलीलियो का टेलीस्कोप, 3- वेसेलियस द्वारा मानव शरीर की शारीरिक रचना एवं 4- हार्वे द्वारा रक्त परिसंचरण का प्रयोग

प्रबोधन ने आत्म-नियम, आधारभूत मानव अधिकार और लोकतांत्रिक विचारों पर बल दिया। यूरोप और अन्य स्थानों पर स्वशासन और लोकतंत्र की स्थापना के लिए आंदोलनों के पीछे प्रबोधन प्रेरणा शक्ति था। इस प्रकार, हम देखेंगे कि प्रबोधन ने अमेरिकी क्रांति (1776), फ्रांसीसी क्रांति (1789) और रूसी क्रांति (1905, 1917) में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

4.1.2. सुधार आन्दोलन (Reformation)

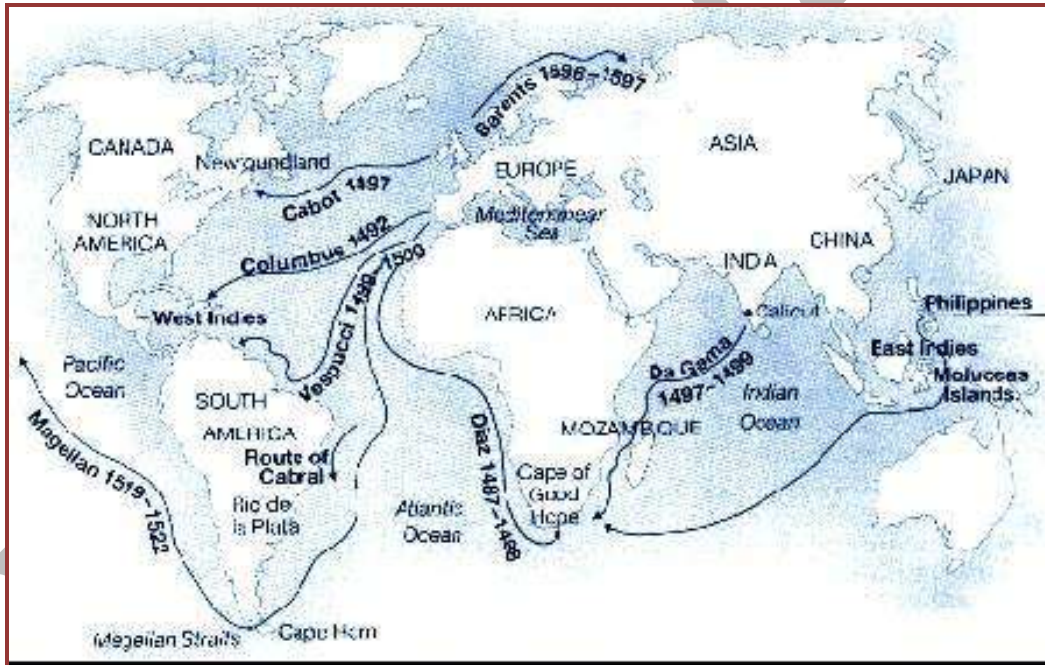
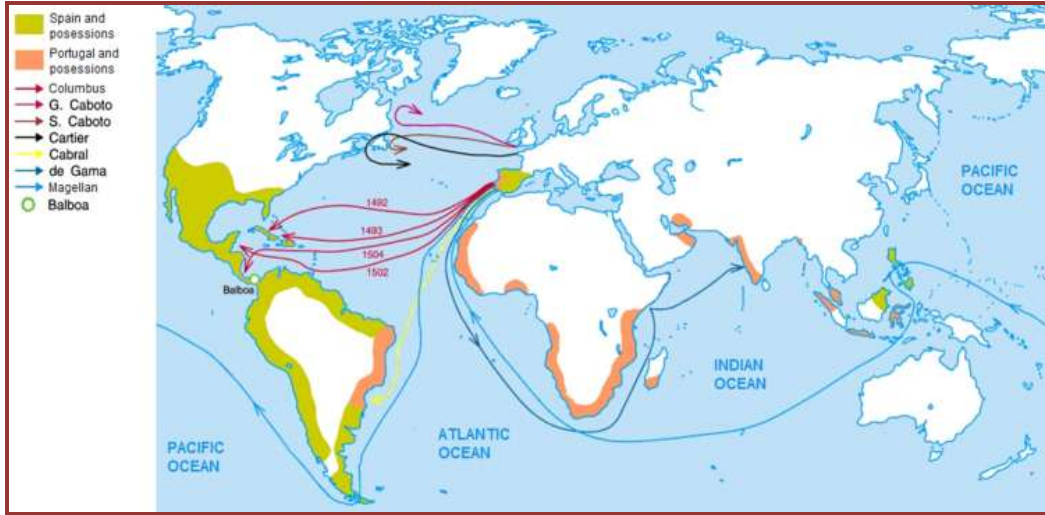


- 16वीं शताब्दी धार्मिक सुधारों की भी साक्षी रही, जिसे प्रोटेस्टेंट सुधार और कैथोलिक सुधार में वर्गीकृत किया जा सकता है।
- प्रोटेस्टेंट सुधार (आरंभिक 16वीं शताब्दी) कट्टरपंथी कैथोलिक चर्च की प्रथाओं और अधिकारों के विरुद्ध एक आंदोलन था। इसके परिणामस्वरूप प्रोटेस्टेंटिज़्म का उदय हुआ और कैथोलिक चर्च के विरोध में, प्रोटेस्टेंट नेताओं ने यूरोप के विभिन्न देशों में प्रोटेस्टेंट चर्च स्थापित करना आरंभ कर दिया। क्षमा पत्र और चर्च की अन्य बुराइयों का विरोध करने वाले एक पादरी मार्टिन लूथर के नेतृत्व में पहला प्रोटेस्टेंट चर्च राजा के समर्थन से जर्मनी में (1520-1545 से) स्थापित किया गया।
- राजनीतिक कारणों से भी जर्मन शासकों ने लूथर का समर्थन किया। वे पोप के अधिकार से स्वतंत्रता चाहते थे और चर्च के धन पर नियंत्रण रखना चाहते थे। इसके तुरंत बाद, प्रोटेस्टेंट सुधार यूरोप के बाकी भागों में फैल गया।
- यूरोप के विभिन्न भागों में राष्ट्रवाद के विकास के कारण रोम स्थित कैथोलिक चर्च और पोप के प्राधिकार के विरुद्ध लोगों के मन में घृणा की भावना विकसित हुई। इंग्लैंड में, राजा हेनरी VIII ने खुद को चर्च का प्रमुख घोषित कर दिया। इसके पश्चात् रानी एलिज़ाबेथ ने रोमन चर्च से अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर और कुछ सुधारवादी सिद्धांतों को अपना कर इंग्लैंड के चर्च को आधिकारिक चर्च बनाया।
- प्रोटेस्टेंट चर्चों ने संघात लैटिन के बजाय लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषा को अंगीकार किया। बाइबल का स्थानीय भाषाओं में अनुवाद किया गया (यह भारतीय पुनर्जागरण के दौरान संस्कृत के स्थान पर स्थानीय भाषाओं के प्रयोग के समान था)। स्थानीय भाषाओं के उपयोग ने राष्ट्रीय चेतना को और बढ़ा दिया और इस प्रकार पुनर्जागरण और सुधार आंदोलनों को यूरोप में राष्ट्रवाद का प्रणेता कहा जा सकता है।
- तर्कशक्ति को धर्म की तुलना में अधिक महत्व दिया गया।
- 17वीं शताब्दी तक, आधे यूरोप ने अपने प्रोटेस्टेंट चर्चों की स्थापना कर ली थी।
- **कैथोलिक सुधार या प्रति सुधार (काउंटर रिफॉर्मेशन- 16 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में)**
 - यह प्रोटेस्टेंट चर्चों की बढ़ती हुई लोकप्रियता की प्रतिक्रिया में कैथोलिक चर्च द्वारा आरंभ की गई एक सुधार प्रक्रिया थी। स्पेन में, सुधारवादियों ने "यीशु के सैनिक" के रूप में काम करने के लिए पादरियों का एक संगठन बनाया। इस संगठन के सदस्यों को 'ईसाई' नाम से जाना जाने लगा और वे अनुयायियों की वापसी हेतु फ्रांस और जर्मनी गए। उन्होंने भारत, चीन, अफ्रीका और अमेरिका में भी मिशन स्थापित किया।
 - इन सुधारों के पश्चात्, दोनों संप्रदायों के अनुयायियों के बीच धार्मिक युद्ध आरंभ हुए, और दोनों पक्षों के कई अनुयायी मारे गए। इंग्लैंड में प्रोटेस्टेंट के विरुद्ध हिंसा के परिणामस्वरूप उत्तरी अमेरिका में उनका प्रवास हुआ, जहां उनके द्वारा स्थापित उपनिवेशों ने बाद में यू.एस.ए. की स्थापना की नींव रखी। इंग्लैंड में, राजा चार्ल्स प्रथम की कैथोलिक समर्थक धार्मिक नीतियों के कारण, यह धार्मिक हिंसा ब्रिटिश गृह युद्ध (1642-51) में परिवर्तित हो गई, जो संसद समर्थकों और राजशाही समर्थकों के मध्य सरकार के प्रारूप को लेकर लड़ा गया था।

4.2. अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का आरंभ

- खोजी यात्राओं (15वीं शताब्दी के अंत में) ने यूरोप में आधुनिक युग के आरंभ को विशिष्ट बनाया था। इसके परिणामस्वरूप यूरोपीय लोगों ने एशिया और अमेरिका में नए देशों की खोज की।
- इटली दुनिया के शेष हिस्सों के साथ व्यापार में आभासी एकाधिकार स्थापित करने वाला प्रथम देश था। बाद में 15वीं शताब्दी के अंत में अमेरिका, एशिया और अफ्रीका के नए क्षेत्रों की खोज के कारण

व्यापार को बढ़ावा मिला। इससे कई यूरोपीय देशों की अर्थव्यवस्था में परिवर्तन आया। इसके अतिरिक्त, इन नए क्षेत्रों की खोज के साथ, उपनिवेशवाद का आरम्भ हुआ। प्रारंभिक औपनिवेशिक शक्तियाँ पुर्तगाल और स्पेन थीं। ब्रिटेन, डच और फ्रांस शीघ्र ही इस होड़ में सम्मिलित हो गए, तथा पुर्तगाल और स्पेन को कई स्थानों पर उनके उपनिवेशों से प्रतिस्थापित कर दिया।



4.3. निरंकुश राजतंत्रों का उदय

- राजा और मध्य वर्ग (अधिकांशतः व्यापारी) के गठजोड़ और मध्य युग (600 ईस्वी से 1500 ईस्वी) के अंत तक सामंतवाद के पतन ने सत्ता पर अपनी पकड़ मजबूत करने में राजा की सहायता की। निरंकुश राजतंत्र के रूप में शक्तिशाली शासकों ने सामंतों को अपने अधीन कर लिया और चर्च के राजनीतिक हस्तक्षेप को खारिज कर दिया।
- सन् 1665 में निरंकुशता को एक लिखित संविधान में सम्मिलित करने वाला डेनमार्क प्रथम राष्ट्र बना। इसके अतिरिक्त, प्रशा (वर्तमान जर्मनी), इंग्लैंड, हॉलैंड, ऑस्ट्रिया, फ्रांस आदि में शक्तिशाली राजतंत्र थे। उदाहरण के लिए, लुई चौदहवें ने 17वीं शताब्दी में फ्रांसीसी साम्राज्य को संगठित किया और 18वीं सदी के पहले दशक तक फ्रांस की गणना एक शक्तिशाली देश के रूप में की जाने लगी।



4.4. इंग्लिश रिबोल्युशन (अंग्रेजी क्रांति)

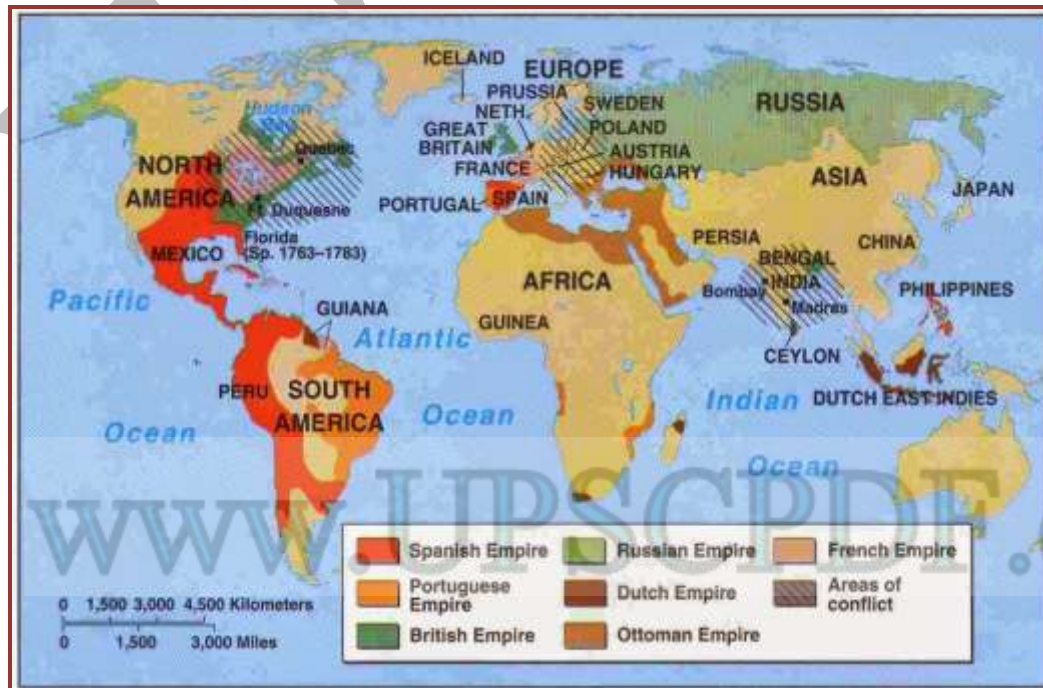
- इंग्लैंड में निरंकुश राजतंत्र के स्थान पर लोकतांत्रिक शासन के लिए संघर्ष हुआ। अंग्रेजी गृह-युद्ध (1642-51) संसद समर्थकों और राजशाही समर्थक के मध्य लड़ा गया था। संसद समर्थक किंग चार्ल्स प्रथम के निरंकुश शासन के विरुद्ध थे। चार्ल्स प्रथम शासन करने के राजा के दैवीय अधिकार में विश्वास करता था। संसद समर्थकों ने राजा द्वारा संसद की सहमति के बिना करारोपण का विरोध किया। इस गृह-युद्ध के परिणाम स्वरूप:
 - राजा को प्राणदंड दे दिया गया,
 - इंग्लैंड में ईसाई पूजा (Christian worship) पर इंग्लैंड के चर्च (इंग्लैंड का चर्च कैथोलिक समर्थक था, इसने तलाक की इजाजत जैसे कुछ ही सुधारवादी सिद्धांतों को अपनाया था) के एकाधिकार का अंत हो गया।
 - इस सिद्धांत की स्थापना हुई कि राजा संसद की सहमति के बिना शासन नहीं कर सकता है।
- इंग्लैंड में 1688 की गौरवपूर्ण क्रांति ने कानूनी रूप से संसद की सर्वोच्चता स्थापित की। इससे यह सुनिश्चित हुआ कि शासन-शक्ति की सर्वोच्च अधिकारिणी संसद है, न कि सम्राट। इस क्रांति के दौरान संसद ने पहली बार राजा को नियुक्त किया। राजा को हटा दिया गया और उसके दामाद, हॉलैंड से **विलियम ऑफ ऑरेंज** को राजा बनाया गया। विलियम और उसकी पत्नी मेरी दोनों को अधिकारों की घोषणा की रक्षा की शपथ लेनी पड़ी और अधिकारों की इस घोषणा को बिल ऑफ राइट्स (1689) के रूप में परिवर्तित किया गया। इस प्रकार, अंग्रेजी गृह युद्ध (1642-1651) द्वारा स्थापित एक सीमित संवैधानिक राजशाही के साथ, इंग्लैंड संसद के वर्चस्व वाला एक लोकतंत्र बन गया।

5. वैश्विक सप्त वर्षीय युद्ध (1756-63)

(Seven Year Global War)

5.1. भूमिका

- वैश्विक सप्त वर्षीय युद्ध 1756 से 1763 तक लड़ा गया था। वास्तव में यह फ्रांस और ब्रिटेन के बीच नौ वर्षों (1754-63) तक लड़ा गया एक युद्ध था। स्पेन, प्रशा और ऑस्ट्रिया जैसी अन्य यूरोपीय शक्तियाँ भी युद्ध में सम्मिलित थीं। इसे वैश्विक युद्ध कहा जाता है क्योंकि यह उत्तरी अमेरिका, कैरेबियाई देशों, भारत, अफ्रीका के पश्चिमी तट और यूरोप में विभिन्न युद्ध-क्षेत्रों में लड़ा गया था।





5.2. युद्ध के कारण

- युद्ध के पीछे का मुख्य कारण ब्रिटेन और फ्रांस के बीच उपनिवेशों पर आधिपत्य के लिए होड़ थी।
- उत्तरी अमेरिका में, अटलांटिक महासागर के पश्चिमी तट पर अंग्रेजों की 13 कॉलोनियाँ थीं। वे अधिक कच्चे माल की चाह में पश्चिम की ओर विस्तार करना चाहते थे और उत्तरी अमेरिका में निर्यात का बाजार बढ़ाना चाहते थे। परन्तु पश्चिमी हिस्सा फ्रांस के प्रभुत्व में था। राजनीतिक और आर्थिक मामलों में ब्रिटिश वर्चस्व को रोकने हेतु फ्रांसीसी उत्तरी अमेरिका के पश्चिमी हिस्से पर अपना प्रभुत्व बनाए रखना चाहते थे।
- ब्रिटेन उस समय औद्योगिक क्रांति (1750 के बाद) के दौर से गुजर रहा था। यह विश्व के बाजारों में ब्रिटिश माल को और अधिक प्रतिस्पर्धी बना रहा था। इसके अतिरिक्त, ब्रिटेन एक प्रभावी समुद्री शक्ति के रूप में उभर रहा था और इसके समुद्री व्यापार से होने वाला लाभ भी बढ़ रहा था। इस प्रकार, फ्रांस को डर था कि उत्तरी अमेरिका में मजबूत ब्रिटेन जल्द ही कैरेबियाई देशों में स्थापित फ्रांसीसी उपनिवेशों को चुनौती देगा। हालांकि उनका डर सही साबित हुआ और गन्ने की लाभदायक कृषि वाले उनके कैरेबियाई उपनिवेशों में अंग्रेजों ने स्पेन और फ्रांस के विरुद्ध युद्ध किया।
- पश्चिम अफ्रीकी देश सेनेगल गोंद के प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध था और यहां के फ्रांसीसी व्यापारिक बंदरगाह भी ब्रिटिश हमलों की चपेट में आए थे।
- भारत में 1757 में प्लासी का युद्ध बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला और ईस्ट इंडिया कंपनी के बीच लड़ा गया था। इस युद्ध के परिणामस्वरूप ईस्ट इंडिया कंपनी को बंगाल में विशेष व्यापारिक अधिकार प्राप्त हुआ और इस क्षेत्र में अंग्रेजों द्वारा सम्पूर्ण व्यापार पर नियंत्रण ने भारत में फ्रांसीसियों के प्रभाव को कम कर दिया। इसके अतिरिक्त, 1760-61 में फ्रांसीसियों और अंग्रेजों के बीच वांडिवाश की लड़ाई ने दक्षिण एशिया में ब्रिटिश वर्चस्व स्थापित किया, जबकि फ्रांस पांडिचेरी तक ही सीमित हो गया।

5.3. परिणाम: 1763 की पेरिस संधि

- सप्त वर्षीय युद्ध के पश्चात् 1763 में पेरिस की संधि पर हस्ताक्षर किये गये थे जिसके परिणाम स्वरूप:
 - ब्रिटेन को फ्रांस से कनाडा और स्पेन से फ्लोरिडा प्राप्त हुए।
 - फ्रांस को कैरेबियन सुगर आइलैंड्स (गन्ने की कृषि से संपन्न क्षेत्र) अपने पास रखने की अनुमति मिली।
 - क्यूबा और फिलिपींस पर स्पेन के नियंत्रण को मान्यता मिल गई।
- विश्व राजनीति पर सप्त वर्षीय युद्ध का प्रभाव यह रहा कि फ्रांस का प्रभुत्व घट गया, वहीं ब्रिटेन ने अपनी औपनिवेशिक शक्ति को संगठित कर लिया। इसने अमेरिकी क्रांति (1765-83) और फ्रांसीसी क्रांति (1789) के लिए भूमि भी तैयार कर दी थी।

6. अमेरिकी क्रांति (1765-1783)

6.1. भूमिका

- उत्तरी अमेरिका में, अटलांटिक महासागर के पश्चिमी तट पर अंग्रेजों ने 13 उपनिवेश स्थापित कर लिए थे। सप्त वर्षीय युद्ध के पश्चात्, शेष उत्तरी अमेरिका में फ्रांस का प्रभुत्व समाप्त हो गया।

6.2. अंग्रेजों के प्रति अमेरिकावासियों के आक्रोश के कारण

- एक ओर जहाँ अंग्रेजों के वाणिज्यिक पूंजीवाद ने श्वेत अमेरिकियों में आक्रोश उत्पन्न किया, वहीं सप्त वर्षीय युद्ध से ऐसी स्थितियाँ उत्पन्न हुईं जिन्होंने अमेरिकी क्रांति के लिए तत्काल चिंगारी का कार्य किया।

6.2.1. वाणिज्यिक पूंजीवाद

- 18वीं शताब्दी में वाणिज्यिक पूंजीवाद अंग्रेजों की औपनिवेशिक नीति का एक प्रमुख हिस्सा था। यह इस विचार पर आधारित था कि सरकार को घरेलू अर्थव्यवस्था और उपनिवेशों को नियंत्रित करना चाहिए, ताकि राष्ट्रीय शक्ति में वृद्धि हो और एक सकारात्मक व्यापार संतुलन स्थापित किया जा सके। एक सकारात्मक व्यापार संतुलन तब प्राप्त होता है जब कोई देश वस्तुओं का शुद्ध निर्यातक (मूल्य के सन्दर्भ में) होता है। यह नीति उपनिवेशों पर व्यापार प्रतिबंध लगाने और इन उपनिवेशों में होने वाले व्यापार में अंग्रेजी कम्पनियों के एकाधिकार की स्थापना के रूप में प्रकट हुई। ये प्रतिबंध, अंग्रेजी औपनिवेशिक नीति के वाणिज्यिक पूंजीवाद के अंग थे और अमेरिकियों द्वारा अपने घरेलू उद्योग विकसित करने की राह में बाधक थे। अंग्रेजी कानून के अंतर्गत इन उपनिवेशों पर अपने व्यापार हेतु गैर-ब्रिटिश पोतों का उपयोग प्रतिबंधित था। अमेरिकी उपनिवेशों से कुछ कच्चे माल का निर्यात केवल ब्रिटेन को ही किया जा सकता था। इसके अतिरिक्त गैर-ब्रिटिश वस्तुओं के अमेरिका में आयात पर बहुत भारी शुल्क लगाया गया था। इस प्रकार के व्यापार प्रतिबंध वाणिज्यिक पूंजीवाद के विशिष्ट लक्षण हैं।
- इसके अतिरिक्त, अमेरिकियों के ऊपर लौह और वस्त्र उद्योग की स्थापना पर कानूनी प्रतिबंध था। क्योंकि लौह और वस्त्र के तैयार माल का निर्यात अंग्रेज व्यवसायियों के लिए एक बहुत ही लाभप्रद व्यवसाय था।



चित्र: अमेरिकी क्रांति का एक दृश्य

6.2.2. 1763 की घोषणा

- अमेरिकी क्रांति का उद्देश्य उत्तरी अमेरिका में अंग्रेजी उपनिवेशवाद को समाप्त करना था। अंग्रेजी संसद ने सप्त वर्षीय के युद्ध की समाप्ति पर सशस्त्र विद्रोह प्रारम्भ करने वाले अमेरिकी मूल निवासियों अर्थात् रेड इंडियंस, के साथ युद्धविराम के रूप में “1763 की घोषणा” (Proclamation of 1763) जारी की जिसमें अमेरिकी अधिवासियों पर अप्लेशियन पर्वत की ओर विस्तार करने पर प्रतिबंध लगा दिया गया क्योंकि यह क्षेत्र अब रेड इंडियंस के लिए आरक्षित था।



- इस घोषणा के पीछे का एक और कारण कुलीन अंग्रेजों द्वारा की गई पैरवी भी थी, जो पश्चिम की ओर विस्तार नहीं चाहते थे क्योंकि उन्होंने अमेरिकी उपनिवेशों में जो भूमि खरीदी थी उस पर बसने वाले श्वेत निवासियों से प्राप्त होने वाले किराये से लाभान्वित हो रहे थे। श्वेत अमेरिकी निवासी जिन्होंने पश्चिम की ओर विस्तार के लिए अंग्रेजों के साथ मिल कर सप्त वर्षीय युद्ध लड़ा था, अब अपने आप को ठगा अनुभव कर रहे थे, इसलिए उन्होंने इस घोषणा की अवहेलना की। उनकी स्थानीय सेनाओं ने पश्चिमी क्षेत्र को अपने नियंत्रण में लाना जारी रखा।

6.2.3. प्रबुद्ध विचारकों की भूमिका

- प्रबोधन या “तर्क का युग” एक आन्दोलन था। इसे 17वीं शताब्दी में **हॉब्स** और **लॉक** जैसे विचारकों ने सरकार के प्रारूप और लोगों के अधिकारों को लेकर प्रस्तुत किया था। 18वीं सदी के मध्य में यह अपने चरम पर था।
- **हॉब्स** निरपेक्ष राजशाही का समर्थक था और उसने सामाजिक अनुबंध की अवधारणा प्रस्तुत की, जिसका अर्थ यह था कि चूंकि सभी लोग स्व-हित में व्यवहार करते हैं अतः लोगों को अपने कुछ अधिकार सरकार के लिए छोड़ देने चाहिए, जिसके बदले में सरकार द्वारा समाज को कानून और व्यवस्था प्रदान करनी चाहिए।
- दूसरी ओर, **लॉक** ने मनुष्य के संबंध में सकारात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया और उसका मानना था कि मनुष्य अपने अनुभव से सीख सकता है। वह स्व-शासन की अवधारणा का समर्थक था। लॉक के अनुसार जन्म से सभी लोग स्वतंत्र और समान हैं और उनके पास **तीन प्राकृतिक अधिकार हैं – जीवन, स्वतंत्रता और सम्पत्ति**। लॉक का कथन था कि सरकार का कर्तव्य है कि वह इन अधिकारों की रक्षा करे। यदि सरकार ऐसा करने में विफल रहती है तो, नागरिकों को उसे उखाड़ फेंकने का अधिकार है। **(विद्रोह का यह अधिकार, फ्रांसिसी क्रांति में जैकोबियन संविधान का भाग भी था।)**
- इन आधुनिक विचारकों और दार्शनिकों ने अमेरिकी और फ्रांसीसी क्रांतियों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। 1750 के आसपास, कई विचारक यथास्थिति को चुनौती दे रहे थे और लोगों के लिए स्वतंत्रता (freedom) और स्वाधीनता (liberty) की मांग कर रहे थे। इन आधुनिक विचारकों और दार्शनिकों ने लोगों के समक्ष शासन के लोकतान्त्रिक स्वरूप का विचार प्रस्तुत किया। उन्होंने गणतंत्रवाद और उदारवाद के विचारों को विकसित होने में सहायता की, जो उपनिवेशवाद के विरुद्ध प्रभावी थे। लॉक, हैरिंगटन और मिल्टन जैसे अंग्रेज दार्शनिकों की यह मान्यता थी कि मनुष्यों के कुछ मौलिक अधिकार होते हैं, जिनका कोई भी सरकार उल्लंघन नहीं कर सकती। 1690 में लॉक ने मनुष्यों के तीन प्राकृतिक अधिकारों को परिभाषित किया। मॉन्टेस्क्यू ने शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का वर्णन किया। फ्रांस के **टॉमस पेन** ने यह तर्क दिया कि यह हास्यापद है कि एक महाद्वीप (उत्तरी अमेरिका) पर एक द्वीप (ब्रिटेन) का शासन है।
- फ्रांस में 18वीं शताब्दी के मध्य में प्रबुद्ध विचारकों ने निम्नलिखित विचार प्रस्तुत किए, जिन्होंने, अमेरिकी क्रांति और फ्रांसीसी क्रांति दोनों ही को प्रभावित किया था:
 - **तर्क:** प्रबुद्ध विचारकों का विश्वास था कि सत्य की खोज तर्क या तर्कसंगत सोच के माध्यम से की जा सकती है। उन्होंने कहा, कि तर्क का अर्थ है किसी की विचारधारा में असहिष्णुता और पूर्वाग्रह का अभाव।
 - **प्रकृति:** उनके लिए जो भी प्राकृतिक था वह अच्छा और उचित था। उनका विश्वास था कि जैसे गति के प्राकृतिक नियम हैं, उसी प्रकार से अर्थशास्त्र और राजनीति शास्त्र के भी प्राकृतिक नियम हैं।
 - **प्रसन्नता:** प्रकृति के नियमों के अनुसार जीने वाला व्यक्ति प्रसन्नता प्राप्त कर ही लेगा। ये दार्शनिक चर्च की इस मध्ययुगीन धारणा को लेकर क्षुब्ध थे कि लोगों को मृत्यु के पश्चात् प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए इस संसार में व्याप्त दुःखों को स्वीकार कर लेना चाहिए। ये पृथ्वी पर सबका कल्याण चाहते थे और उनका विश्वास था कि यह सम्भव है।

- **प्रगति:** समाज की प्रगति में इन यूरोपीय दार्शनिकों ने सर्वप्रथम विश्वास किया। एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ उनका यह मानना था कि, समाज और मानवता को पूर्ण बनाया जा सकता है।
- **स्वाधीनता:** इन दार्शनिकों को उन स्वतंत्रताओं से ईर्ष्या थी जिसे ब्रिटिश जनता ने अपनी गौरवपूर्ण क्रांति (1688) में प्राप्त किया था। फ्रांस में भाषण, धर्म, व्यापार और व्यक्तिगत यात्रा पर कई प्रकार के प्रतिबन्ध थे। उनका मानना था की तर्क के द्वारा समाज को मुक्त किया जा सकता है।



6.2.4. युद्ध (सप्त वर्षीय) व्यय की पुनर्प्राप्ति

- सप्त वर्षीय युद्ध में ब्रिटेन का बहुत धन व्यय हुआ था। जब उसने युद्ध के व्यय को उत्तरी अमेरिका के उपनिवेशों पर टैक्स थोप कर वसूलने का निर्णय किया तो वहाँ के निवासियों ने इसका विरोध किया।

6.2.5. ब्रिटिश संसद में कोई प्रतिनिधित्व नहीं

- ब्रिटिश संसद ने 1765 में स्टाम्प अधिनियम पारित किया, जिसमें अमेरिका के सभी ब्रिटिश उपनिवेशों में सभी प्रकार के व्यवसायिक लेन-देन पर **स्टाम्प कर** लगा दिया गया। उदाहरण के लिए कुछ राशि की टिकट सभी कानून दस्तावेजों किए लिए अनिवार्य बनाई गयी। अमेरिकियों ने इसके प्रतिक्रिया स्वरूप ब्रिटिश वस्तुओं का बहिष्कार किया और जल्द ही कई शहरों में विद्रोह शुरू हो गए जहाँ से कर अधिकारियों को भगा दिया गया।
- चूंकि, ब्रिटिश संसद में कोई अमेरिकी प्रतिनिधित्व नहीं था, इसलिए अमेरिकी नेताओं ने ब्रिटेन द्वारा उन पर किसी भी प्रकार का कर लगाने के अधिकार का विरोध किया। इसके अतिरिक्त अमेरिकियों ने यह अनुभव किया कि इस प्रकार एकत्र किये गये धन को अंग्रेजों के हितों के लिए उपयोग किया गया था, न कि अमेरिकी लोगों के विकास के लिए। **मैसाचुसेट्स सभा** में सभी 13 उपनिवेशों के नेता एकत्र हुए और उन्होंने, **प्रतिनिधित्व नहीं तो कर नहीं (No Taxation without Representation)** के नारे को अपनाया।
- अमेरिकी नेताओं द्वारा ब्रिटिश वस्तुओं के आयात को रोकने की धमकी ने अंग्रेजों को स्टाम्प अधिनियम निरस्त करने के लिए विवश कर दिया।
- पुनः, अमेरिकियों ने उपनिवेशों में उपभोक्ता वस्तुओं के आयात पर शुल्क के विरोधस्वरूप ब्रिटिश वस्तुओं के आयात को घटा कर आधा कर दिया, जिसने अंग्रेजों को चाय पर कर के अतिरिक्त सभी करों को वापस लेने के लिए विवश कर दिया। चाय पर कर बहुत अधिक नहीं था, फिर भी ब्रिटिश सरकार ने इसे वापस नहीं लिया, क्योंकि वे अमेरिकी उपनिवेशों पर अपने कराधान के अधिकार को बनाए रखना चाहते थे। **1773 की बोस्टन टी पार्टी** वस्तुतः चाय पर कर लगाए जाने के विरोधस्वरूप घटित हुई थी। बोस्टन बन्दरगाह पर चाय से भरे एक पोत ने लंगर डाला था। प्रारम्भ में तो अमेरिकियों ने पोत को खाली करने की अनुमति नहीं दी, परिणामस्वरूप कई दिन तक अनिश्चय की स्थिति बनी रही। अंत में जब बोस्टन के ब्रिटेन समर्थक गवर्नर ने पोत को खाली करने का आदेश दिया तो श्वेत प्रवासियों ने अमेरिकी इंडियंस जैसे परिधान पहन कर चाय के सभी डिब्बों को समुद्र में फेंक कर नष्ट कर दिया। कुपित ब्रिटिश सरकार ने इसके प्रतिक्रिया स्वरूप बोस्टन के सभी बन्दरगाहों को व्यापार के लिए बंद कर दिया और **1774 का कोर्सेिव एक्ट (Coercive Acts)** पारित कर दिया। (अमेरिकियों ने इन्हें ब्रिटिश सरकार द्वारा पारित **इन्टॉलरेबल एक्ट** का नाम दिया था।)



चित्र: बोस्टन टी पार्टी



6.2.6. 1774 का कोएर्सिव एक्ट और फिलाडेल्फिया कांग्रेस

- बोस्टन टी पार्टी की घटना के लिए ब्रिटेन ने मैसाचुसेट्स को दंडित करने एवं उसके स्वशासन के अधिकार को समाप्त करने के लिए **कोएर्सिव एक्ट** पारित किया था, जिसकी प्रतिक्रिया स्वरूप 12 उपनिवेशों (जार्जिया ने इसमें भाग नहीं लिया था क्योंकि यह अमेरिकी इंडियन्स के आतंक से निबटने में अंग्रेजों की सहायता पाना चाहता था) ने मिलकर पहले **महाद्वीपीय कांग्रेस या फिलाडेल्फिया कांग्रेस (1774)** का आयोजन किया था। अमेरिकियों ने सम्राट जार्ज तृतीय से घरेलू उद्योगों पर प्रतिबन्ध हटाने, सभी देशों के साथ कम दरों पर व्यापार करने और अमेरिकी उपनिवेशों पर उनकी सहमति के बिना कर न लगाने की अपील भी की थी। ब्रिटेन ने इन मांगों का अर्थ एक विद्रोह के रूप में लिया और उपनिवेशों पर 1775 में हमला कर दिया। इसके कारण अमेरिकी प्रतिनिधियों ने **1776 में स्वतंत्रता का घोषणापत्र** बनाया (जिसका प्रारूप **थॉमस जेफरसन** द्वारा बनाया गया था), इसके निम्नलिखित बिंदु थे:
 - ईश्वर ने सभी मनुष्यों को समान बनाया है।
 - ईश्वर ने उन्हें कुछ ऐसे अधिकार दिए हैं, जिन्हें उनसे कोई छीन नहीं सकता। इन अधिकारों में जीवन, स्वतंत्रता और सुख के लिए प्रयत्न शामिल हैं।
 - गणतंत्रवाद, अर्थात् सत्ता का स्रोत जनता है और दृढ़तापूर्वक यह कहा गया कि जनता को अपनी सरकार बनाने का पूर्ण अधिकार है।
 - स्वतंत्रता अर्थात् अमेरिकी उपनिवेशों का ब्रिटिश सरकार ने दमन किया था और इन उपनिवेशों को मुक्त और स्वतंत्र राज्य होना चाहिए (*ध्यान दें यहाँ उपनिवेशों ने स्वयं को "स्वतंत्र राज्य" घोषित किया था। संयुक्त राज्य संघ बनाने के लिए राज्यों के साथ आने का सिद्धांत इन पंक्तियों में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है)।
- स्वतंत्रता के घोषणापत्र ने दो कार्य किए – इसने "स्व-प्रमाणित सत्य (self evident truths)" के रूप में लॉक जैसे प्रबुद्ध विचारकों के राजनीतिक दर्शन का सार उपलब्ध कराया और उपनिवेशों और मातृ-देश से संबंध विच्छेद के औचित्य को सिद्ध करने के लिए शिकायतों को सूचीबद्ध किया।



चित्र: महाद्वीपीय कांग्रेस या फिलाडेल्फिया कांग्रेस (1774)

6.3. अमेरिकी क्रांति युद्ध या अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम (1775)

- इसके पश्चात् की घटना को अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम कहा गया। राजभक्त ऐसे ब्रिटिश प्रवासी थे जो ब्रिटेन के प्रति निष्ठावान रहे और उनकी ओर से लड़े। फ्रांस, स्पेन और डच गणराज्य ने गुप्त रूप से अमेरिकियों की सहायता की। 1777 में ब्रिटेन ने कनाडा की ओर से हमला कर के अमेरिका को घेरने का प्रयास किया। इस युद्ध में उनकी विफलता अमेरिकियों के पक्ष में एक महत्वपूर्ण मोड़ सिद्ध हुई। स्पेन की सेना ने ब्रिटिश सेना को फ्लोरिडा से खदेड़ दिया। (फ्लोरिडा सप्त वर्षीय युद्ध से अंग्रेजों के पास था। बाद में फ्लोरिडा को अमेरिका ने स्पेन से खरीद लिया था)।
- 1783 में ब्रिटिश कमांडर कार्नवालिस ने जार्ज वाशिंगटन के नेतृत्व वाली सेना के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया।

6.3.1. 1783 की द्वितीय पेरिस संधि

- अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम इस संधि के साथ समाप्त हुआ। इस संधि के कुछ महत्वपूर्ण अनुच्छेद इस प्रकार थे:
 - संयुक्त राज्य अमेरिका और ब्रिटेन के मध्य सतत शांति।
 - सभी अमेरिकी उपनिवेशों को स्वतंत्र, सार्वभौम और स्वतंत्र राज्यों के रूप में मान्यता दी गई, इसके साथ ही ब्रिटेन ने सरकार, सम्पत्ति और क्षेत्र पर सभी दावों को छोड़ दिया।
 - अमेरिका ने सभी राजभक्त लोगों की जब्त की गई भूमियों को वापस कर दिया।
 - स्पेन ने ब्रिटेन के साथ एक अलग संधि पर हस्ताक्षर किए और फ्लोरिडा को वापस ले लिया (जिसे 1763 की पेरिस की संधि के पश्चात् ब्रिटेन को दे दिया था)।



6.3.2. अमेरिकी क्रांति की समालोचना

- 1789 में संयुक्त राज्य का संविधान प्रभावी हो गया। यह पहला लिखित गणराज्यिक संविधान था। **बिल ऑफ़ राइट्स** संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान के पहले दस संशोधनों का समूह है और इसमें अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता, प्रेस, धर्म और न्याय की स्वतंत्रता सम्मिलित है।
- अमेरिकी क्रांति ने विश्व के पहले लोकतान्त्रिक गणराज्य की स्थापना की। जल्द ही अमेरिका औद्योगिक क्रांति के युग में प्रवेश कर गया। इसके साथ ही इसने उत्तरी अमेरिका में पश्चिमी की ओर अपने क्षेत्र का विस्तार किया और फ्रांस से लुइसियाना जैसे क्षेत्र को 1803 में और स्पेन से फ्लोरिडा को 1819 में खरीद लिया।
- संयुक्त राज्य अमेरिका का गणतन्त्र भी पूर्वाग्रहों से मुक्त नहीं था। गणराज्य वास्तव में लोकतान्त्रिक नहीं था, क्योंकि महिलाओं, अश्वेतों और रेड इंडियन्स को मतदान का अधिकार नहीं था। समानता के सिद्धांत पर **दासता** एक धब्बा थी और अंततः दासता का उन्मूलन अमेरिका के उत्तरी और दक्षिणी राज्यों के बीच 1861-65 के गृहयुद्ध के पश्चात् ही किया जा सका। दक्षिणी राज्य दासता उन्मूलन के विरुद्ध थे, क्योंकि उनकी अर्थव्यवस्था कृषि आधारित थी और उसके लिए उन्हें सस्ते अश्वेत श्रमिकों की आवश्यकता थी। उन्होंने दास व्यापार से लाभ भी अर्जित किया था और वे चाहते थे कि दास प्रथा का विस्तार नए अधिग्रहीत क्षेत्रों में भी किया जाए।
- यह तर्क दिया जा सकता है कि अमेरिकी संविधान में जिस मनुष्य को संदर्भित किया गया है वह सम्पत्तिवान मनुष्य है, क्योंकि अधिकार केवल उन्हीं लोगों को दिए गये थे जिनके पास सम्पत्ति थी।
- फिर भी, अमेरिकी क्रांति का सबसे महत्वपूर्ण योगदान यह रहा कि इसने स्वाधीनता, समानता, मौलिक अधिकार, राष्ट्रवाद और उपनिवेशवाद विरोधी विचारों को आगे बढ़ाया। उस समय में कुलीन वर्ग को बिना किसी विशेषाधिकार के सभी के लिए समानता एक क्रान्तिकारी विचार था, जबकि समूचा विश्व सामन्तवाद के अधीन था, जहाँ कुलीन वर्ग प्रमुख वर्ग था। सम्पत्ति पर कोई भी कर न लगाने का विचार, जो सम्पत्ति के अधिकार से प्रभावी हुआ था अपने समय में एक अनूठा विचार था। इस प्रकार से अमेरिकी क्रांति विचारों और राजनीतिक व्यवस्था की क्रांति थी और भविष्य की घटनाओं पर इसका बहुत प्रभाव पड़ा, उनमें सबसे प्रमुख 1789 की फ्रांस की क्रांति थी।

7. फ्रांसीसी क्रांति और नेपोलियन के युद्ध



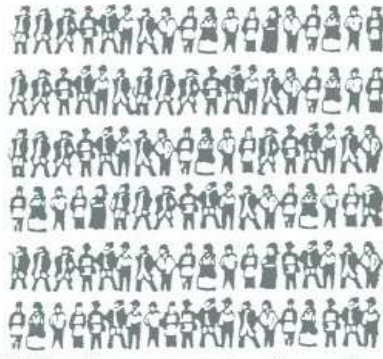
- क्रान्ति से पूर्व फ्रांस में जो राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियाँ मौजूद थीं उनके लिए 'पुरातन व्यवस्था' शब्द का प्रयोग किया जाता है। फ्रांसीसी क्रांति निरंकुश शासन, विशेषाधिकार प्राप्त समाज एवं संकटग्रस्त अर्थव्यवस्था का उत्पाद थी।



7.1. फ्रांसीसी क्रांति के पीछे निहित कारण

7.1.1. तीन एस्टेट्स

- 18वीं सदी के फ्रांस का समाज विशेषाधिकार एवं विशेषाधिकार विहीन वर्गों में विभक्त था। फ्रांसीसी समाज तीन वर्गों या एस्टेट्स में विभाजित था। पादरी लोग प्रथम एस्टेट्स में आते थे, कुलीन वर्ग द्वितीय एस्टेट्स में और तृतीय एस्टेट्स के लोग जनसाधारण वर्ग से सम्बंधित थे, जिसमें मध्यम वर्ग, कृषक, दस्तकार, शहरी श्रमिक, व्यापारी और बुद्धिजीवी लोग सम्मिलित थे। इस वर्ग में ही अधिकांश आबादी सम्मिलित थी।

First Estate	Second Estate	Third Estate
 Clergy	 Nobles	 Middle class, peasants, city workers
1% of the people owned 10% of the land	2% of the people owned 25% of the land	97% of the people owned 65% of the land

चित्र: श्री एस्टेट्स

- पादरी लोग भी दो वर्गों में विभाजित थे- उच्च एवं निम्न। उच्च पादरी वर्ग के पास अपार धन था तथा ये सबसे बड़े भूस्वामी थे तो दूसरी ओर निम्न वर्ग के पादरी चर्च के सभी धार्मिक कार्यों को संपादित करते थे तथा सामान्य जीवन जीते थे। यह वर्ग जनसाधारण से सहानुभूति रखता था तथा क्रान्ति के समय इन लोगों ने क्रांतिकारियों का साथ दिया। कुलीन वर्ग का सरकारी सेवा, सेना और अन्य सार्वजनिक पदों के सभी महत्वपूर्ण आधिकारिक पदों पर एकाधिकार था। हालांकि, पादरी और कुलीन वर्ग के लोग किसी कर का भुगतान नहीं करते थे और कोई उत्पादक काम नहीं करते थे।
- किसान आबादी का 80 प्रतिशत थे। किसानों में भी, भू-स्वामी किसान, काश्तकार और भूमिहीन श्रमिक आदि रूपों में कई स्तरों पर उप-विभाजन था। भू-स्वामी किसानों का प्रतिशत बहुत कम था। काश्तकारों को अपनी उपज का 2/3 भाग लगान के रूप में भुगतान करना पड़ता था। वहीं दूसरी ओर, भूमिहीन श्रमिक, बहुत ही तुच्छ मजदूरी पर जीवन निर्वाह करते थे। हालांकि, तकनीकी रूप से कोई भी सर्फ नहीं था, लेकिन अभी भी सामंती विशेषाधिकार के रूप में बेगार अस्तित्व में था और प्रायः यह सार्वजनिक कार्यों के लिए लिया जाता था।
- मध्यम वर्ग में लेखक, चिकित्सक, सिविल सेवक जैसे शिक्षित लोग और व्यापारियों जैसे संपन्न लोग थे। हालांकि आर्थिक रूप से मध्यम वर्ग महत्वपूर्ण था, लेकिन उन्हें समाज में बहुत कम सामाजिक प्रतिष्ठा

और राजनीतिक अधिकार प्राप्त थे। दस्तकार और शहरी श्रमिक भी गरीबी में दुःखमय जीवन जी रहे थे। उन्हें कार्यस्थल पर कोई अधिकार नहीं प्राप्त था और नियोक्ता द्वारा अच्छे आचरण के प्रमाण पत्र के बिना वे नौकरी नहीं बदल सकते थे। मध्य वर्ग की कुछ आर्थिक शिकायतें भी थीं। इस वर्ग ने व्यापार-वाणिज्य से संपत्ति तो अर्जित कर ली थी, परन्तु उनके व्यापार पर कई तरह के प्रतिबन्ध लगे थे और इन्हें जगह-जगह चुंगी देनी पड़ती थी। व्यापार के लिए उन्मुक्त वातावरण की चाह में ही इन लोगों ने क्रान्ति को नेतृत्व प्रदान किया।



- तृतीय एस्टेट्स के पास मताधिकार नहीं था। वहीं दूसरी ओर, पादरी लोग और कुलीन वर्ग के लोग किसी भी तरह के कर का भुगतान नहीं करते थे और कर का बोझ पूरी तरह से तृतीय एस्टेट्स द्वारा वहन किया जाता था। यही लोगों की शिकायतों का प्रमुख कारण था। इस प्रकार 1789 ई. की फ्रांसीसी क्रान्ति कई मायनों में फ्रांसीसी समाज में व्याप्त असमानता के विरुद्ध संघर्ष थी।

7.1.2. अलोकप्रिय राजतंत्र और वित्तीय कठिनाइयाँ

- राजा लुई XIVवें (1643-1715) ने 'मैं ही राज्य हूँ' (I am the state) की संकल्पना के आधार पर निरंकुश राज्य की स्थापना की और शक्ति का अतिशय केन्द्रीकरण राजतंत्र के पक्ष में कर दिया। इसके उत्तराधिकारी राजा लुई XVवां (1715-1774) व लुई XVIवां (1774-1793) विलासी, अदूरदर्शी और निष्क्रिय शासक थे। लुई XVIवां निकृष्ट बुद्धिमत्ता वाला अकुशल, अयोग्य तथा अकर्मण्य शासक था। लोग उसकी पत्नी मैरी एंटोनिट से घृणा करते थे। वह अधिकारियों की नियुक्ति में हस्तक्षेप किया करती थी। राजा भी अधिकारियों को नियुक्त करने में पक्षपात (भाई-भतीजावाद) करता था। देश की शासन पद्धति पूरी तरह नौकरशाही पर निर्भर थी, जो वंशानुगत थी।
- औद्योगिक क्रान्ति के उभरते लक्षणों का लाभ ये राजा अपने उद्योग-धंधों के लिए नहीं ले पाए और इसे मात्र अपने व्यक्तिगत हितों के लिए ही प्रयोग करते रहे। उद्योगों पर राज्य के कड़े नियंत्रण के कारण बेरोजगारी बढ़ी और इसने तस्करी और लूट-पाट की घटनाओं को भी बढ़ाया। राजा लुई XVवें के अधीन, आस्ट्रिया के उत्तराधिकार युद्ध एवं सप्तवर्षीय युद्ध जैसे महंगे युद्धों के कारण फ्रांस में वित्तीय संकट व्याप्त था। अमेरिकी क्रांति में ब्रिटेन के विरुद्ध फ्रांस द्वारा किये गए अमेरिकियों की सहायता ने फ्रांस को दिवालियापन के कगार पर पहुँचा दिया था। जहाँ एक ओर फ्रांस अमेरिकी क्रांति का समर्थक था (जिसका उद्देश्य लोगों के लिए स्वशासन, स्वतंत्रता, समानता और लोकतंत्र था), वहीं दूसरी ओर फ्रांस में निरंकुश राजतंत्र था। इस प्रकार यहाँ की शासन व्यवस्था अमेरिकी क्रांति की नींव रखने वाले विचारों के साथ फिट नहीं बैठती थी।

7.1.3. प्रबुद्ध विचारकों की भूमिका

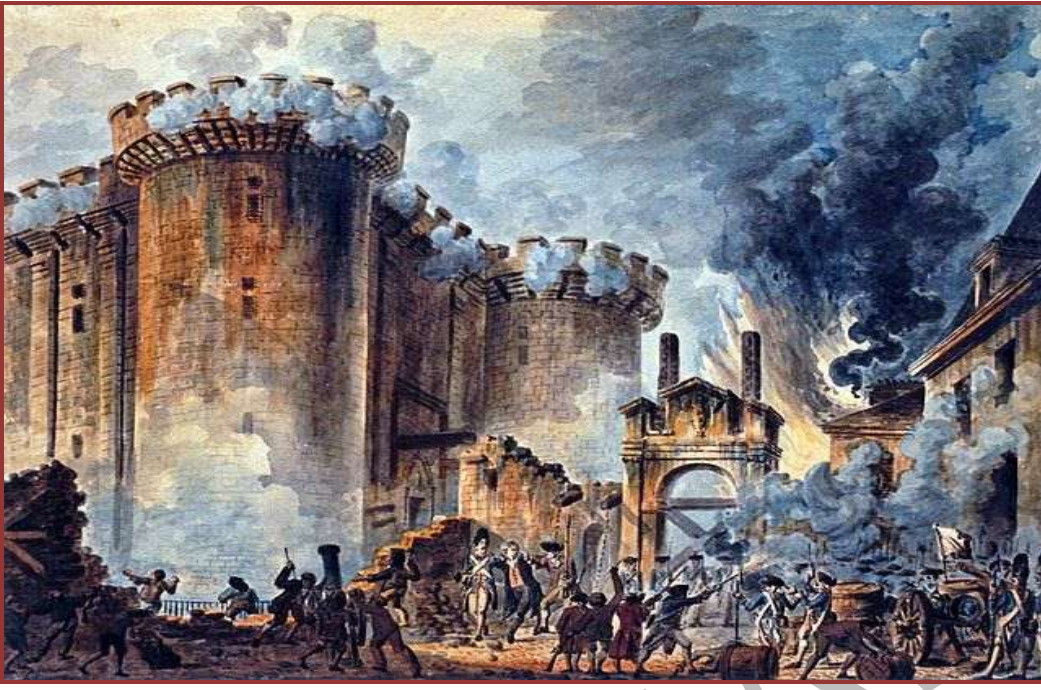
- फ्रांस के मध्यवर्ग में परिवर्तन की संभावना और उसके लिए आकांक्षा पैदा करने में फ्रांसीसी विचारकों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। 18वीं शताब्दी में यूरोप में वैचारिक स्तर पर एक नया दृष्टिकोण अपनाया जा रहा था। उनका नारा 'तर्क, सहिष्णुता और मानवता' था। इस प्रकार क्रांतिकारी प्रबुद्ध विचारकों ने फ्रांसीसी क्रांति को सिर्फ हिंसात्मक होने से बचाया ही नहीं अपितु इसे एक बौद्धिक स्तर भी प्रदान किया। इन विचारकों में वाल्टेयर, मॉन्टेस्क्यू, रूसो आदि का नाम लिया जा सकता है। तार्किकता के आधार पर इन विचारकों ने तर्क दिया कि मनुष्य प्रसन्न रहने के लिए पैदा हुआ है, न कि पीड़ा भोगने के लिए; जैसा कि चर्च का कहना है। समाज में प्रचलित पूर्वाग्रहों को समाप्त करके यह प्रसन्नता प्राप्त की जा सकती है।
- इसके अतिरिक्त, उन्होंने धर्मनिरपेक्षता पर ध्यान केंद्रित किया क्योंकि या तो वे ईश्वर को मानते ही नहीं थे या फिर अपनी चर्चाओं में उसकी उपेक्षा करते थे। प्रकृति के सिद्धांत ने पादरियों को विचारकों के हमले के दायरे में ला दिया। उन्होंने बल दिया कि प्रकृति के नियमों का अध्ययन करने की आवश्यकता है और धर्म इसमें कोई सहायता नहीं कर सकता है बल्कि तर्क की शक्ति प्रकृति की समझ की कुंजी है।



- **वाल्टेयर** ने अपनी पुस्तक के माध्यम से ब्रिटेन की उदार राजनीति, धर्म और विचार की स्वतंत्रता का वर्णन कर फ्रांस की पुरातन व्यवस्था में व्याप्त बुराईयों को उजागर किया। उसका मानना था कि सभी धर्म व्यर्थ हैं क्योंकि वे विवेक व तर्क के विरुद्ध थे। नास्तिक और भौतिकवादी लोकप्रियता प्राप्त कर रहे थे क्योंकि इसमें दिखाया जाता था कि मनुष्य की नियति उसके अपने हाथों में है।
- **मॉन्टेस्क्यू** ने 'दैवीय अधिकारों के सिद्धांतों' का खण्डन करते हुए '**शक्ति के पृथक्करण**' का सिद्धांत प्रतिपादित कर मात्र फ्रांसीसी राजनीतिक संस्थाओं की आलोचना ही नहीं की अपितु एक विकल्प भी प्रस्तुत किया। उसने न तो क्रान्ति की बात की और न ही राजतंत्र को समाप्त करने की वकालत की बल्कि उसने केवल निरंकुश राजतंत्र के दोषों को उजागर किया और संवैधानिक राजतंत्र की बात की।
- **रूसो** ने भी क्रान्ति की बात नहीं की लेकिन उसने मनुष्य की स्वतंत्रता और समानता का पक्ष लिया। उसने घोषित किया कि जनता की इच्छा ही किसी सरकार को वैध बनाती है। फ्रांसीसी क्रान्ति के नारे स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व उसी के विचारों से प्रभावित थे। **नेपोलियन** ने उसके महत्व को स्वीकार करते हुए कहा कि **यदि रूसो नहीं होता तो फ्रांस में क्रान्ति नहीं होती।**
- **दिदरो** ने विश्वकोष (इनसाइक्लोपीडिया) के माध्यम से धार्मिक असहिष्णुता, दोषपूर्ण कर व्यवस्था, गुलामों के व्यापार और निर्मम फौजदारी कानून जैसी व्यवस्थाओं पर प्रहार किया। विचारकों का एक वर्ग इस समय फ्रांस की आर्थिक अव्यवस्था और उसके विश्लेषण पर भी केन्द्रित था। इनमें **तूर्जो, क्वेसने और मिराबो** प्रमुख हैं। क्वेसने मुक्त व्यापार, व्यापारिक उत्पादन एवं वितरण की पूर्ण स्वतंत्रता का समर्थक था तथा चुंगी कर एवं अन्य करों का विरोधी था। इस प्रकार स्पष्ट रूप से दार्शनिकों और विचारकों ने फ्रांसीसी क्रान्ति की पृष्ठभूमि तैयार की।

7.2. 1789 की फ्रांसीसी क्रान्ति की घटनाएँ

- 1789 में, राजा लुई XVI ने अतिरिक्त कोष के लिए सहमति प्राप्त करने हेतु एस्टेट्स जनरल की बैठक बुलाई। एस्टेट्स जनरल तीनों एस्टेट्स की पुरानी सामंती सभा थी। तृतीय एस्टेट्स के प्रतिनिधियों ने अतिरिक्त कोष का विरोध किया क्योंकि वही एकमात्र करदाता थे और ऐसे किसी भी अतिरिक्त वित्त से पड़ने वाले कर का बोझ उन्हें ही उठाना पड़ता। हालांकि उन्होंने सभा के लिए दोगुने प्रतिनिधित्व की मांग की थी और प्राप्त भी कर लिया था, लेकिन जब उन्हें पता चला कि प्रतिनिधियों की संख्या से निरपेक्ष सभी तीनों एस्टेट्स को बराबर मत प्राप्त होगा तो वे क्रुद्ध हो गए। जब वाद-विवाद में गतिरोध पैदा हो गया, तो तृतीय एस्टेट्स के प्रतिनिधियों ने अपने आपको **नेशनल असेंबली** घोषित कर दिया, जो एस्टेट्स की सभा (जैसे एस्टेट्स जनरल) की बजाय लोगों की सभा थी। शीघ्र ही वे अपनी बैठक निकट के शाही टेनिस कोर्ट में लेकर चले गए। उन्होंने घोषणा की कि वे केवल तृतीय वर्ग के नहीं सारे राष्ट्र के प्रतिनिधि हैं। उनका लक्ष्य फ्रांस के लिए संविधान तैयार करना था जिसमें तृतीय एस्टेट्स का भी मताधिकार होता। द्वितीय एस्टेट्स ने इसे पुरातन व्यवस्था समाप्त करने के प्रयास के रूप में देखा और राजा को नेशनल असेंबली को कुचलने के लिए विवश किया। जब राजा ने तृतीय एस्टेट्स के नेताओं को तितर-बितर करने के लिए सैनिकों को भेजा, तो लोग क्रुद्ध हो गए और बास्तील किले (यहां प्रायः राजनीतिक बन्दी रखे जाते थे) को तोड़ने चल पड़े (14 जुलाई 1789)। उन्होंने कैदियों को मुक्त करा लिया और जेल में संग्रहीत हथियारों और गोला-बारूद पर नियंत्रण प्राप्त कर लिया। यह राजा के विरुद्ध प्रतीकात्मक विद्रोह था और वस्तुतः इसने उसके अधिकार के अंत को प्रदर्शित किया। बास्तील की घटना के बाद, नेशनल असेंबली ने कानून बनाना आरंभ किया और **मनुष्य और नागरिकों के अधिकार (Rights of Man and Citizen)** नामक फ्रांसीसी क्रान्ति के प्रसिद्ध प्रलेख को अंगीकृत किया। नेशनल असेंबली ने सामंतवाद का उन्मूलन कर दिया, फ्रांसीसी चर्च पर से रोमन नियंत्रण को समाप्त कर दिया और राजव्यवस्था में चर्च का प्रभाव कम करने के लिए चर्च की शक्तियाँ कम कर दीं।



चित्र: बास्तील किले का पतन



- मनुष्य और नागरिकों के अधिकारों की घोषणा (27 अगस्त 1789) में निम्नलिखित बिंदु निहित थे:
 - सभी मनुष्य स्वतंत्र और समान हैं।
 - कानून के समक्ष समानता।
 - दोषसिद्धि तक निर्दोषता का सिद्धांत।
 - सभी लोग सार्वजनिक पदों के लिए योग्य हैं।
 - भाषण और प्रेस की स्वतंत्रता।
 - निजी संपत्ति का अधिकार, जब तक कि सार्वजनिक कल्याण इस अधिकार का उल्लंघन करना आवश्यक न बनाए।
 - समाज के पास प्रत्येक सिविल सेवक से उत्तरदायित्व की मांग करने का अधिकार है।
- इस प्रलेख ने राष्ट्र शब्द को उसका आधुनिक अर्थ दिया, अर्थात् राष्ट्र एक प्रदेश में रहने वाले लोगों का कुल योग है, न कि स्वयं प्रदेश। राष्ट्र के विचार के बाद लोगों की संप्रभुता का विचार आया। इस प्रकार लोग सभी शक्तियों और प्राधिकारों का स्रोत थे और लोगों से ऊपर कोई भी शासक नहीं हो सकता था, सिवाय गणतंत्र के।
- फ्रांसीसी क्रांतिकारी युद्ध (The French Revolutionary War) 1792 से 1802 तक लड़े गए कई युद्धों की एक शृंखला थी। फ्रांस ने ये युद्ध ऑस्ट्रिया, प्रशा और सेवाय (इटालियन राज्य) के निरंकुश राजतंत्रों के विरुद्ध लड़े। इसके पीछे प्रमुख कारण यह था कि ये निरंकुश राजतंत्र क्रांति से व्युत्पन्न स्वतंत्रता और समानता के विचारों के विरुद्ध सत्ता पर अपनी पकड़ ढीली होने से खुद को बचाने की इच्छा रखते थे। इन्हें क्रांतिकारी युद्धों के रूप में जाना जाता है क्योंकि फ्रांस 1789 की क्रांति की रक्षा करने का प्रयास कर रहा था, जिसे पड़ोसी राजतंत्रों से खतरा था। पड़ोसी राजतंत्रों को अपने देशों में फ्रांसीसी क्रांति फैलने का डर था। इसलिए वे फ्रांस में राजतंत्र पुनर्स्थापित करना चाहते थे। फ्रांसीसी बलों ने सहायता प्रदान करके और स्वतंत्रता, समानता तथा बंधुत्व के विचारों का प्रसार करके उन क्षेत्रों के लोगों का भी समर्थन जुटाने का प्रयास किया जो उनके नियंत्रण में आए। 1793 में राजा और फ्रांस की रानी को मृत्यु के घाट उतार दिया गया और फिर फ्रांस ने ब्रिटेन, हॉलैंड, स्पेन और हंगरी के विरुद्ध पूर्व-रक्षात्मक (pre-emptive) युद्ध घोषित कर दिया।

7.2.1. जैकोबियन और नेपोलियन



- मतदाता के रूप में योग्य होने के लिए, व्यक्ति की एक निश्चित सीमा से अधिक आय होनी चाहिए थी। इस सशर्त मताधिकार के कारण तृतीय एस्टेट्स का बहुमत अभी भी मतदाता नहीं बन सका था। अभिजात्य वर्ग का स्थान बुर्जुआ वर्ग ने ले लिया था और किसानों और शहरी श्रमिकों की स्थिति में उस तरह का सुधार नहीं आया था जैसी उन्होंने आशा की थी। इसके तुरंत बाद, 1793 में कट्टरपंथी, उग्र और संगठित जैकोबियन फ्रांस में सत्ता में आए। उन्होंने आय खंड हटाकर मताधिकार को शर्तहीन बना दिया।
- जैकोबियन के अधीन, फ्रांसीसी क्रांति क्रांतिकारी चरण में पहुंच गया। **जैकोबियन दल का नेता रॉब्सपीयर** था, इसे **आतंक के शासन (Reign of Terror)** के प्रतीक रूप में जाना गया। यह **गिलोटिन** के माध्यम से उन सभी को मृत्यु के घाट उतार देना चाहता था जो क्रांति के विरोधी थे। राजा और रानी को 1793 में मृत्यु के घाट उतार दिया गया। सीधा सा विचार यह था कि सभी आलोचकों के विरुद्ध गिलोटिन का प्रयोग करके एक नई शुरुआत की जा सकती थी। शीघ्र ही असहमति व्यक्त करने वाले किसी भी व्यक्ति को दण्डित करने के लिए गिलोटिन का उपयोग किया जाने लगा। जैकोबियन के अधीन फ्रांस ने अराजकता के दौर में प्रवेश किया जहां कानून के शासन के लिए बहुत कम गुंजाइश थी।



चित्र: गिलोटिन

- कई जैकोबियन्स को भी मृत्यु के घाट उतार दिया गया। शीघ्र ही स्वयं जैकोबियन दल भी **रॉब्सपीयर** के विरुद्ध खड़े हो गए और गिलोटिन के माध्यम से उसका अंत कर दिया और इस प्रकार **आतंक का शासन** समाप्त हो गया। बुर्जुआ वर्ग फिर सत्ता में आ गया और उनकी सरकार को **डाइरेक्टरी** कहा गया। 1795 में उन्होंने सशर्त मताधिकार पुनर्स्थापित करते हुए फिर से संविधान तैयार किया। इसके साथ ही फ्रांसीसी सेना की शक्ति और प्रतिष्ठा भी बढ़ रही थी। 1799 में, तख्तापलट के माध्यम से नेपोलियन फ्रांस को सैन्य शासन के अधीन लाया। कुछ वर्ष बाद उसने स्वयं को सम्राट घोषित कर दिया और फ्रांस में राजतंत्र पुनः स्थापित हो गया।



रॉब्सपीयर



नेपोलियन



- 1803 और 1815 के बीच के वर्ष नेपोलियन के युद्धों के लिए जाने जाते हैं। इस काल में फ्रांस शेष यूरोप के विरुद्ध लड़ा और फ्रांस की क्रांति के विचारों को इसने अपने विजित क्षेत्रों तक फैलाया। नेपोलियन की सेना ने सर्फडम को समाप्त कर दिया और यूरोप में विजित क्षेत्रों के प्रशासन का आधुनिकीकरण किया। 1815 में वाटरलू (यूनाइटेड किंगडम ऑफ़ नीदरलैंड-वर्तमान बेल्जियम) में नेपोलियन की पराजय के बाद, शेष यूरोप के राजतंत्रों ने पुराने राजवंश की सत्ता में आने में सहायता की। लेकिन फ्रांस का यह राजतंत्र कभी भी 1789 की क्रांति से पूर्व के स्तर पर अपना नियंत्रण पुनर्स्थापित नहीं कर पाया और शीघ्र ही फ्रांस क्रांतियों की चार लहरों का साक्षी बना और अंततः 1871 में गणराज्य बन गया।

7.3. फ्रांसीसी क्रांति के प्रभाव/रचनात्मक आलोचना

7.3.1. पक्ष

- फ्रांसीसी क्रांति का न केवल फ्रांस पर बल्कि शेष विश्व पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। फ्रांस के साथ युद्धों ने स्पेन और पुर्तगाल जैसी यूरोपीय औपनिवेशिक शक्तियों को दुर्बल बना दिया और दक्षिण और मध्य अमेरिका में उनके उपनिवेशों ने अपने आप को स्वतंत्र गणराज्य घोषित कर दिया। मध्य अमेरिका में फ्रांसीसी क्रांति से प्रेरित होकर हैती ने सशस्त्र विद्रोह के माध्यम से 1804 में स्वयं फ्रांस से स्वतंत्रता प्राप्त कर ली। यह विद्रोह 1792 में आरंभ हुआ था। 1813 से लेकर 1824 के दौरान साइमन बोलीवर ने कई दक्षिण अमेरिकी देशों को स्वतंत्र कराया और आगे चलकर उन्हें कोलंबिया (Gran Columbia) के नेतृत्व में संयुक्त राज्य अमेरिका के जैसे एक संघ के रूप में संगठित करने का प्रयास किया। उसने सशस्त्र विद्रोह के माध्यम से स्पेनिश शासन से वेनेजुएला, कोलंबिया, इक्वाडोर, पेरू और बोलीविया को मुक्त कराया।
- फ्रांसीसी क्रांति के बाद दासता का उन्मूलन इस दमनकारी व्यवस्था के विरुद्ध पहला कदम था। ब्रिटेन ने 1833 में इस ओर कदम बढ़ाया जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका ने 1865 में इस पर प्रतिबंध लगाया।
- इसके चलते फ्रांस में सामंतवाद का विनाश हो गया क्योंकि पुरातन सामंती व्यवस्था के सभी कानूनों को निरस्त कर दिया गया था और चर्च की भूमि जब्त कर ली गई थी और उसका पुनर्वितरण कर दिया गया था। विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग, अर्थात् प्रथम और द्वितीय एस्टेट्स का उन्मूलन कर दिया गया। 19वीं सदी में यूरोप में फैलने वाली सामंतवाद विरोधी लहर अपनी उत्पत्ति के लिए फ्रांस में होने वाली घटनाओं की ऋणी थी। इसके साथ ही, फ्रांसीसी क्रांति ने प्रचलित सामंतवाद के विरुद्ध पूंजीवाद की नवीन आर्थिक व्यवस्था में प्रवेशक का कार्य किया।



- जैकोबियन संविधान पहला वास्तविक लोकतांत्रिक संविधान था, हालाँकि यह कभी भी प्रभावी नहीं हो पाया था। इसने सभी को मत देने का अधिकार और यहां तक कि विद्रोह करने का अधिकार दिया, जिसका तात्पर्य सरकार के विरुद्ध विद्रोह करने या उठ खड़े होने का अधिकार है। जैकोबियन संविधान के अधीन सरकार पर सभी को काम देने का भी उत्तरदायित्व था और लोगों की 'प्रसन्नता' राज्य की अति महत्वपूर्ण नीति बनने वाली थी।
- नेपोलियन के शासन के अधीन, फ्रांस के लिए नागरिक संहिता के रूप में नेपोलियन संहिता प्रचलित की गई। सरकारी नौकरियों के लिए योग्यता आधारित भर्ती और स्पष्ट रूप से लिखित कानून जैसे इसके कुछ प्रावधान फ्रांस और अन्य राष्ट्रों की वर्तमान कानूनी प्रणाली पर अभी भी अपना प्रभाव डाल रहे हैं।
- फ्रांसीसी क्रांति ने पूरे विश्व के उपनिवेशों में उपनिवेशवाद के विरुद्ध आंदोलनों को प्रेरित किया, जबकि लोकतंत्र और स्वशासन का आंदोलन पूरे यूरोप में उठ खड़ा हुआ। फ्रांसीसी क्रांति में, श्रमिक वर्ग ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। क्रांति लाने के लिए उन्होंने गुप्त समाजों का गठन किया था। आगे चलकर पूरे यूरोप, विशेषकर औद्योगिक ब्रिटेन में श्रमिकों की एकता में वृद्धि देखी गई (जैसा कि 1830 और 1840 के दशक के चार्टिस्ट आंदोलन में परिलक्षित हुआ)। इसने श्रमिकों को मताधिकार और अन्य कल्याणकारी उपाय प्राप्त करने में सहायता की। फ्रांसीसी क्रांति के समानता और स्वतंत्रता के विचारों ने 19वीं सदी में ब्रिटेन को और अधिक लोकतांत्रिक देश बनाने में सहायता की।

7.3.2. विपक्ष

- इन सब के बावजूद अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में फ्रांसीसी क्रांति को सीमित सफलता मिली। वास्तव में, क्रांति के बाद आने वाला शासन श्रमिकों की शिकायतें दूर करने में विफल रहा जो कि 1789 के विद्रोह के दौरान महत्वपूर्ण थे। इससे केवल किसानों को लाभ पहुँचा था (क्योंकि वे विशेषाधिकार प्राप्त वर्गों से जब्त भूमि के स्वामी बन बैठे थे)। क्रांति लोकतांत्रिक शासन लाने में विफल रही थी और जैकोबियन के अधीन आतंक के शासन के दौरान बड़े पैमाने पर आम लोगों को मौत के घाट उतार दिया गया था।
- अपने निरंतर युद्धों के कारण नेपोलियन मुक्तिदाता के रूप में नहीं, बल्कि एक विजेता के रूप में देखा गया जिसकी परिणति आक्रांत क्षेत्रों में राष्ट्रवाद के उदय के रूप में हुई। यह राष्ट्रवाद 1870 के दशक में जर्मनी और इटली के एकीकरण के लिए लाभप्रद सिद्ध होने वाला था।

8. राष्ट्रवाद - उदय और प्रभाव

- फ्रांसीसी क्रांति से राष्ट्रीयता का उदय हुआ और राष्ट्रीय सीमाओं के पुनर्निर्माण सहित विश्व पर इसका महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा।
- ब्रिटेन और फ्रांस पहले राष्ट्र-राज्य थे जहाँ राष्ट्रवाद उदित हुआ।

8.1. राष्ट्र की संकल्पना

- फ्रांसीसी क्रांति तक ब्रिटेन के अतिरिक्त समस्त यूरोप सामंती व्यवस्था के अधीन था और राष्ट्र की कोई अवधारणा नहीं थी। लगभग पूरे यूरोप में राजाओं द्वारा शासित बिखरे हुए प्रदेशों वाले साम्राज्य थे, जहाँ सामंत अपनी जागीर के स्वामी थे और कस्बे और शहर शासन की इकाई थे। इस प्रकार राष्ट्र-राज्य जैसी कोई अवधारणा विद्यमान नहीं थी, जैसा कि इसे आज हम समझते हैं। फ्रांसीसी क्रांति ने राष्ट्र की अवधारणा प्रदान की जिसमें सम्पूर्ण जनता सम्मिलित थी और इसी में संप्रभुता निहित थी। इस प्रकार, फ्रांसीसी और अमेरिकी क्रांतियों के कारण राष्ट्रवाद का निरूपण स्वशासन के रूप में किया जाने लगा।



8.2. निरंकुश राजाओं द्वारा दुरुपयोग

- इसके अतिरिक्त, जब नेपोलियन ने यूरोप के कुछ क्षेत्रों पर आक्रमण किया तो वहां के निरंकुश राजाओं ने इस आक्रमण का विरोध किया और इस आक्रमण के विरुद्ध अपने प्रदेश की रक्षा करने की इच्छा के रूप में राष्ट्रवाद का उदय हुआ। इस प्रकार, राजाओं ने सत्ता पर अपनी पकड़ मजबूत करने के लिए राष्ट्रवाद का उपयोग किया और 19वीं सदी का यूरोप आक्रामक निरंकुश राज्यों का साक्षी बना जिनका उद्देश्य क्षेत्रीय और औपनिवेशिक साम्राज्य का विस्तार था। नेपोलियन के युद्धों के बाद, यूरोप लोकतांत्रिक क्रांति की लहरों का साक्षी बना, लेकिन यूरोप के राजतंत्र फ्रांसीसी क्रांति के लोकतांत्रिक विचारों के विरुद्ध थे और उन्होंने राष्ट्रवाद का उपयोग अपने साम्राज्य की रक्षा करने हेतु ही नहीं अपितु साम्राज्य विस्तार करने के लिए ढाल के रूप में किया। युद्ध में विजयों (उदाहरण के लिए, बिस्मार्क ने फ्रांसीसी-प्रशा युद्ध के माध्यम से 1870 में जर्मनी पर अपनी पकड़ मजबूत की) और अधिक उपनिवेशों के अधिग्रहण (उदाहरण के लिए, गृहदेश में राजनीतिक लाभ के लिए इटली ने अफ्रीका में औपनिवेशिक दौड़ में प्रवेश किया) का उपयोग सत्ता पर पकड़ बनाए रखने के लिए किया गया।

8.3. क्रांतिकारी विचारकों की भूमिका

- आधुनिक विचारकों ने राष्ट्रवाद की अवधारणा में बहुत योगदान दिया। स्व-शासन और राष्ट्रवाद का विचार राष्ट्रीय सीमाओं में भी परिवर्तन ला रहा था। 1832 में यूनान ऑटोमन साम्राज्य से स्वतंत्र हो गया जबकि 1839 में अपनी लोकतांत्रिक क्रांति की सहायता से बेल्जियम, यूनाइटेड किंगडम ऑफ नीदरलैंड से स्वतंत्र हो गया।
- जर्मनी और इटली के एकीकरण आंदोलनों ने अपनी काफी ऊर्जा इन विचारकों के विचारों से प्राप्त की थी। उदाहरण के लिए, गैरीबाल्डी और मैज़िनी ने इटली के एकीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी, जबकि अंग्रेज कवि बैरन ने ग्रीक (यूनान) की स्वतंत्रता के पक्ष में लिखा और इसके संघर्ष में भाग लिया।
- इन विचारकों ने उस समय की साहित्यिक सामग्रियों में रोमांसवाद (Romanticism) डाला, जिसने लोगों को राष्ट्र की महिमा के निमित्त अपनी सेनाओं, स्वतंत्रता सेनानियों और राजशाहियों को अपना समर्थन देने के लिए उत्साहित किया।

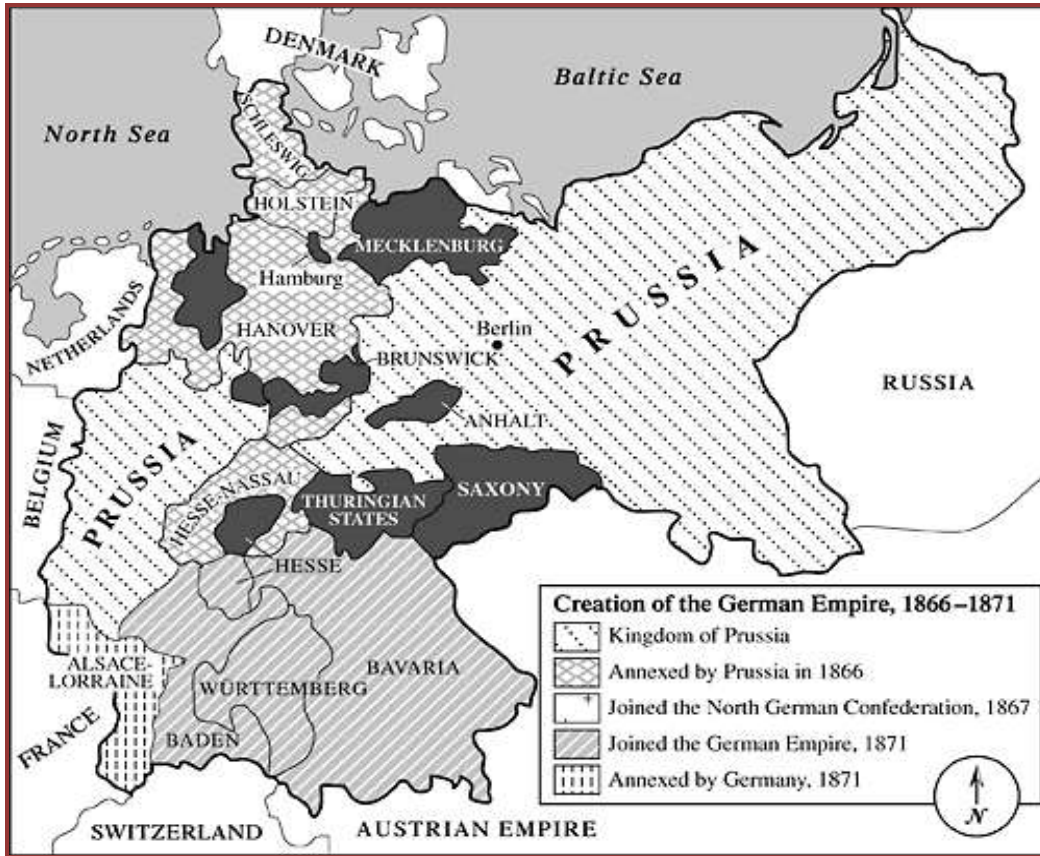
8.4. औद्योगिक क्रांति और राष्ट्रवाद

- 19वीं सदी के दौरान यूरोप में औद्योगिक क्रांति ने आर्थिक क्षेत्र में राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा में वृद्धि की और उपनिवेशों के अधिग्रहण के लिए राष्ट्र-राज्यों को एक दूसरे के साथ संघर्ष में उलझा दिया।

9. जर्मनी और इटली का एकीकरण

- 19वीं सदी के यूरोप की प्रमुख विशेषता राष्ट्रीय एकीकरण और स्वतंत्रता के लिए संघर्ष था। यूनान और बेल्जियम इस सदी में स्वतंत्र हो गए और जर्मनी और इटली का संगठित स्वतंत्र राज्यों के रूप में उदय हुआ।

9.1. जर्मनी का एकीकरण



9.1.1. सामाजिक और आर्थिक स्थिति

- जर्मनी की सामाजिक स्थिति किसी भी सामंती समाज में दिखाई देने वाली सामाजिक स्थिति की भांति ही थी। जर्मनी में जमींदारों को जंकर (Junkers) कहा जाता था। उनका राज्य के मामलों पर प्रभुत्व था। जर्मनी के विभाजन के परिणामस्वरूप कई राज्यों में आर्थिक विकास निम्नतम स्तर पर था क्योंकि ये राज्य वस्तुओं के मुक्त आवागमन पर प्रतिबंध आरोपित करते थे। पिछड़ी सामाजिक-राजनीतिक व्यवस्था ने भी निम्न आर्थिक स्थिति में योगदान दिया।

9.1.2. नेपोलियन के युद्धों और फ्रांसीसी क्रांति की भूमिका

- 18वीं सदी में, जर्मनी कई राज्यों में विभाजित था। नेपोलियन के युद्धों ने कई राज्यों की कृत्रिम सीमाएं समाप्त कर दी और उन्हें संयुक्त कर दिया लेकिन अभी भी 39 राज्य बने रहे। प्रशा इनमें सबसे बड़ा और सबसे शक्तिशाली था। फ्रांसीसी क्रांति के बाद, जर्मन लोग सरकार के लोकतांत्रिक स्वरूप और आर्थिक सुधारों की मांग करने लगे। राष्ट्रवाद की लहर ने जर्मनों को इन राज्यों के एकीकरण के लिए उत्साहित किया। इन सभी वैचारिक अंतर्प्रवाहों का परिणाम 1815 में जर्मन परिसंघ के गठन के रूप में सामने आया। इसमें ऑस्ट्रिया और प्रशा साम्राज्य के कुछ हिस्से तथा कुछ जर्मन राज्य सम्मिलित थे। प्रशा और ऑस्ट्रिया का बड़ा हिस्सा इस परिसंघ में सम्मिलित नहीं था। परिसंघ का उद्देश्य संघटक सदस्यों की आर्थिक नीतियों का समन्वय करना था। लेकिन निम्नलिखित कारणों से यह विफल हो गया:
 - प्रत्येक घटक राज्य ने अपनी स्वतंत्रता का दावा किया और लोगों की सामंतवाद विरोधी आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए कुछ नहीं किया।
 - एकीकृत जर्मनी में लोकतंत्र की स्थापना के लिए 1848 का विद्रोह।
 - जर्मन परिसंघ के मामलों पर वर्चस्व के लिए ऑस्ट्रिया और प्रशा के बीच प्रतिद्वंद्विता।

9.1.3. लोकतंत्र के अधीन एकजुट करने में विफलता

- 1848 में लोकतंत्र की स्थापना के लिए अधिकांश यूरोप में विद्रोह हुए। इनमें से अधिकांश विद्रोहों का नेतृत्व श्रमिकों ने किया। 1848 में, सभी जर्मन राज्यों में राजतंत्रात्मक शासन की वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था को उखाड़ फेंकने के लिए विद्रोह आरंभ हो गए और शासकों को शासन का लोकतांत्रिक स्वरूप प्रदान करने के लिए विवश होना पड़ा। तत्पश्चात संविधान सभा का गठन किया गया और इसकी बैठक सभी जर्मन राज्यों को एकजुट करने और नए संविधान का प्रारूप तैयार करने के लक्ष्य के साथ फ्रैंकफर्ट में हुई। प्रशा के राजा ने संयुक्त जर्मनी के लिए संवैधानिक राजशाही का प्रस्ताव ठुकरा दिया। इसी बीच, शासकों की स्थिति में सुधार हुआ और उन्होंने राष्ट्रवादियों का दमन आरंभ कर दिया। फलस्वरूप राष्ट्रवादियों को संतुष्ट करने के लिए अभी तक दिए गए अधिकार वापस ले लिए गए और प्रशा की राजशाही सबसे मजबूत बनकर उभरी।

9.1.4. बिस्मार्क के नेतृत्व में एकीकरण: रक्त और लौह की नीति

- जर्मनी का एकीकरण होना अभी भी बाकी था, लेकिन लोकतांत्रिक सरकार के अधीन नहीं बल्कि प्रशा के सैन्य कमांडर बिस्मार्क के अधीन सैन्य शक्ति के माध्यम से अर्थात् बिस्मार्क की **रक्त और लौह की नीति** के अधीन। उसकी नीति राज्य के मामलों में भूस्वामी अभिजात्य वर्ग के हितों और सेना का वर्चस्व सुरक्षित करने की थी। बिस्मार्क ने रक्त और लौह की नीति का अनुसरण किया। इसके अंतर्गत उसने राज्यों को बल प्रयोग द्वारा एकजुट किया। यह नीति द्रुत गति से और महान रणनीतिक विशेषज्ञता के साथ कार्यान्वित की गई। इस नीति का उद्देश्य प्रशा की राजशाही के अधीन जर्मनी का एकीकरण करना था और इसके लिए जर्मन परिसंघ को नष्ट करना आवश्यक था।



चित्र: बिस्मार्क

- अपनी नीति कार्यान्वित करने के लिए बिस्मार्क एवं उसके नेतृत्व में प्रशा ने निम्नलिखित कदम उठाए:
 - जर्मन परिसंघ के अधिकांश प्रदेशों पर कब्जा करने के लिए बिस्मार्क के नेतृत्व में प्रशा ने सर्वप्रथम 1864 में डेनमार्क के विरुद्ध ऑस्ट्रिया के साथ गठजोड़ बनाकर युद्ध किया।
 - फिर उसने ऑस्ट्रिया को हराने के लिए 1866 में इटली के साथ गठजोड़ किया और उसे जर्मन परिसंघ से बाहर निकाल फेंका। फलस्वरूप परिसंघ स्वतः समाप्त हो गया।
 - 1867 में, बिस्मार्क ने उत्तरी जर्मन परिसंघ का गठन किया। उसने 22 जर्मन राज्यों को संयुक्त किया लेकिन बवेरिया जैसे दक्षिणी जर्मन राज्यों को छोड़ दिया, जो स्वतंत्र बने रहे। इस परिसंघ के संविधान ने प्रशा के राजा को राज्य का वंशानुगत प्रमुख बनाया। दक्षिणी राज्यों ने ऑस्ट्रिया समर्थक नीति का अनुसरण किया लेकिन 1870 के फ्रांसीसी-प्रशियाई युद्ध में जर्मन विजय के बाद उन्हें संयुक्त होने के लिए विवश किया गया।

- 1870 में हुए फ्रांसीसी-प्रशियाई युद्ध ने जर्मनी के अंतिम एकीकरण का मार्ग प्रशस्त किया। 1870 में, फ्रांसीसी राजशाही लड़खड़ा रही थी और लोकतांत्रिक गणराज्य की स्थापना के लिए एक और क्रांति की परिस्थितियाँ तैयार हो गई थीं। फ्रांसीसी राजा लुई बोनापार्ट ने 1870 में जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। वह आंतरिक समस्याओं से जनता का ध्यान हटाने के लिए युद्ध-विजय का उपयोग करना चाहता था और अपने शासन के प्रति विश्वसनीयता बढ़ाने के लिए युद्ध के लाभों का उपयोग करना चाहता था। वहीं दूसरी ओर, युद्ध के लिए फ्रांसीसियों को उत्तेजित करने के लिए बिस्मार्क भी आंशिक रूप से उत्तरदायी था। परिणाम यह निकला कि फ्रांस हार गया और उसने 1871 में स्वयं को गणतंत्र घोषित कर दिया। इस युद्ध में जर्मनी की जीत ने बिस्मार्क को जर्मनी के बाकी हिस्सों को संयुक्त जर्मनी (1871) में मिलाने का सुअवसर प्रदान किया।



9.2. इटली का एकीकरण

- इटली का एकीकरण दो-चरणों की प्रक्रिया थी। पहले चरण में, उसे ऑस्ट्रिया से स्वतंत्रता प्राप्त करनी पड़ी और दूसरे चरण में, इटली के स्वतंत्र राज्यों को एक इकाई में एकजुट करना पड़ा। मैज़िनी और गैरीबाल्डी क्रांतिकारी थे जिन्होंने इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। मैज़िनी ने इटली के एकीकरण के लिए 1831 में यंग इटली नामक संगठन का गठन किया। 1831 के बाद से, यंग इटली ने बार-बार राजशाही के विरुद्ध विद्रोह का प्रयास किया लेकिन ये सभी प्रयास लोकतांत्रिक और संयुक्त इटली की स्थापना करने में विफल रहे। फिर भी, यंग इटली ने लोगों को उदार सरकार के अधीन संयुक्त इटली के लिए प्रोत्साहित किया।

9.2.1. 1848 के विद्रोहों की भूमिका

- 1848 के विद्रोहों का नेतृत्व बुद्धिजीवियों और उदारवादियों ने किया। वे प्रतिक्रियावादी ऑस्ट्रियाई नियंत्रण के विरुद्ध थे और उदार शासन चाहते थे। इन विद्रोहों ने भी लोकतांत्रिक सुधारों का मार्ग प्रशस्त किया, लेकिन इनके परिणामस्वरूप न तो ऑस्ट्रिया से स्वतंत्रता प्राप्त हुयी और न ही संयुक्त इटली के रूप में इन राज्यों का समेकन हो सका।

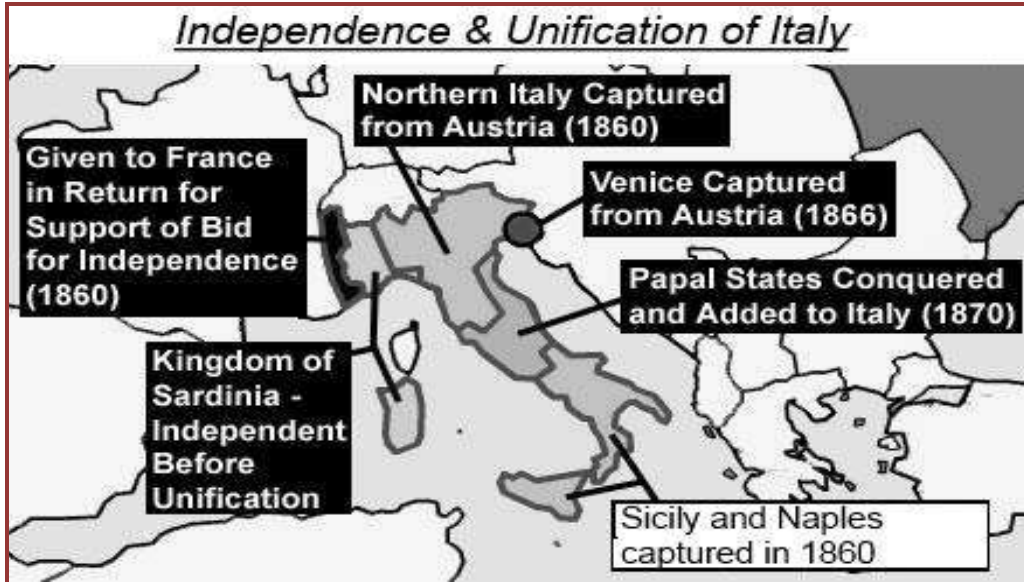
9.2.2. प्रधान मंत्री कावूर की बिस्मार्क सदृश नीति के माध्यम से एकीकरण



चित्र: कावूर



- 1848 के विद्रोह के बाद, सार्डीनिया के प्रधान मंत्री कावूर ने इटली के एकीकरण का प्रयास किया। उसकी नीति बिस्मार्क की नीति जैसी ही थी। 1859 में, सार्डीनिया ने ऑस्ट्रिया के विरुद्ध युद्ध में फ्रांस के साथ गठजोड़ बनाया, जिससे इटली के कई राज्य ऑस्ट्रियाई शासन से मुक्त हो गए और उनमें से अधिकांश को सार्डीनिया के राजा के अधीन संयुक्त कर दिया गया, सिवाय:
 - वेनेशिया के जो अभी भी ऑस्ट्रियाई शासन के अधीन था,
 - दो सिसलियों का राज्य (The Kingdom of two Sicilies) (दक्षिणी इटली में), जो सिसली के राज्य और नेपल्स के राज्य का सामूहिक नाम था; और
 - रोम में अपनी राजधानी सहित पोप के अधीन राज्य, जो सीधे पोप के शासन के अधीन था, जिसे फ्रांसीसी सेनाओं की सहायता प्राप्त थी।



- गैरिबाल्डी के नेतृत्व में क्रांतिकारी सेनानियों ने फर्डिनेंड द्वितीय के निरंकुश शासन से सिसली और नेपल्स को मुक्त करा लिया और परिणामस्वरूप 1860 में ये राज्य सार्डीनिया के राजतंत्र के अधीन हो गए और इटली का साम्राज्य स्थापित हो गया। 1866 के ऑस्ट्रियाई-प्रशियाई युद्ध का लाभ उठाते हुए वेनिस पर भी इटली ने कब्जा कर लिया। अब केवल रोम बचा था। पोप को फ्रांसीसी सेनाओं की सुरक्षा मिली थी। 1870 के फ्रांसीसी-प्रशियाई युद्ध के चलते कमजोर हो जाने के कारण, फ्रांस अब पोप की सहायता नहीं कर सकता था परिणामस्वरूप 1871 में रोम पर कब्जा कर लिया गया और इसे इटली की राजधानी बना दिया गया। इस प्रकार एकीकरण की प्रक्रिया पूरी हो गई। एकीकरण के बाद, इटली और जर्मनी का औद्योगिकीकरण आरंभ हुआ और इन राज्यों में भी औद्योगिक क्रांति का आगमन हुआ।



चित्र: गैरिबाल्डी

10. औद्योगिक क्रांति



10.1. औद्योगिक क्रांति से पहले वस्तुओं के उत्पादन की विधि

- वस्तुओं के उत्पादन की विधि का विकास क्रम इस प्रकार रहा है- गिल्ड प्रणाली से लेकर पुटिंग आउट प्रणाली या घरेलू पद्धति से लेकर कारखाना प्रणाली तक। जब व्यापार की मात्रा में और वृद्धि हुई और गिल्ड मांग का मुकाबला नहीं कर पाए तो गिल्ड प्रणाली में गिरावट आई क्योंकि वे बड़े पैमाने पर उत्पादन के लिए अनुपयुक्त थे।

10.1.1. पुटिंग-आउट प्रणाली

- गिल्ड प्रणाली में गिरावट के परिणामस्वरूप पुटिंग-आउट प्रणाली का आगमन हुआ। इस प्रणाली के अंतर्गत पूंजीपति व्यापारी, कारीगरों को कच्चा माल उपलब्ध करवाता था तथा कारीगर अपने निवास पर ही अपने औजारों से निर्माण करते थे। इस प्रकार कच्चे माल और अंतिम उत्पाद का स्वामी व्यापारी होता था और श्रमिक केवल मजदूरी कमाने वाले होते थे। मशीनों के आविष्कार ने सब कुछ बदलकर रख दिया और इस प्रणाली का स्थान कारखाना प्रणाली ने ग्रहण कर लिया।

10.1.2. कारखाना प्रणाली

- इस प्रणाली के अंतर्गत, उत्पादन का केंद्र घर से कारखाने में स्थानांतरित हो गया। पहली बार, श्रमिक दैनंदिन आधार पर घर से कार्यस्थल तक यात्रा करने लगे। पहली बार वे मशीनों पर काम करते हुए एक छत के नीचे बड़ी संख्या में एकत्रित हुए। पूंजी पर पूंजीपति का स्वामित्व होता था और कामगार मात्र उत्पादन का एक और पहलू थे और उत्पादन का स्वामी पूंजीपति होता था।

10.2. औद्योगिक क्रांति क्या है?

- इंग्लैंड के आर्थिक इतिहासकार **टायनबी** ने सर्वप्रथम 'औद्योगिक क्रांति' शब्द का प्रयोग किया। यह सर्वप्रथम **18वीं सदी के मध्य** में इंग्लैंड में घटित हुई।
- वस्तुतः औद्योगिक क्रांति उत्पादन प्रणाली में परिवर्तन थी, जिसमें शिल्प के स्थान पर मशीनों का भारी मात्रा में प्रयोग प्रारम्भ हुआ। यह मूलतः तकनीकी नवोन्मेषों की सहायता और उनके प्रसार से अर्थव्यवस्था में वस्तुओं के उत्पादन की आर्थिक प्रक्रियाओं में क्रांति है, जिसने वस्तुओं के उत्पादन की गति को बढ़ावा दिया। मशीनीकृत उत्पादन में परिणत होने वाले नवाचार, इन मशीनों को शक्ति देने के नए स्रोतों का विकास, संचार और परिवहन के क्षेत्र में तकनीकी प्रयत्न वे कुछ प्रक्रियाएं हैं, जिन्हें एक साथ मिलाकर '**औद्योगिक क्रांति**' कहा जाता है। यह क्रांति इसलिए थी क्योंकि इसने न केवल पूरी तरह से आर्थिक क्षेत्र में बल्कि सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्र में भी सुधार किया।

10.3. इंग्लैंड में ही सर्वप्रथम औद्योगिक क्रांति क्यों?

1750 से पहले इंग्लैंड में होने वाली घटनाओं ने ऐसी स्थिति तैयार की, जो औद्योगिक क्रांति के अनुकूल थी।

- सामंतवाद के अंत के बाद पूंजीवाद का उदय औद्योगिक क्रांति के लिए महत्वपूर्ण था। ऐसा इसलिए था क्योंकि पूंजीवाद के साथ अधिक मौद्रिक लाभ कमाने की इच्छा पैदा हुई, जिसे कम लागत पर अधिक वस्तुएँ उत्पादित करने के नए तरीकों का विकास करके प्राप्त किया जा सकता था।
- विकासशील कस्बों और शहरों में जीवन के नए तरीकों के कारण निर्मित वस्तुओं की भारी मांग थी।
- गांव के लोग औद्योगिक उत्पादन के लिए श्रमिकों के रूप में शहरों में पलायन कर रहे थे। इससे ऐसे नए विचारों की खोज को बल मिला जिनसे औद्योगिक दक्षता में वृद्धि की जा सकती थी। तर्क पर आधारित पुनर्जागरण और रिफॉर्मेशन (सुधार आन्दोलन) ने पहले ही लोगों पर नए विचारों की खोज का बीड़ा उठाने का मनोवैज्ञानिक प्रभाव डाला था।



- इसके अतिरिक्त इंग्लैंड का समाज लोकतंत्र (गौरवपूर्ण क्रांति, 1688) की दिशा में बढ़ चला था, जिससे विचारों की अधिक स्वतंत्रता की गुंजाइश पैदा हुई और इसके बाद ब्रिटेन में संसदीय प्रजातंत्र मजबूती के साथ स्थापित हुआ।
- शेष विश्व के साथ व्यापार से होने वाले आर्थिक लाभ ने पूंजी निर्माण के लिए, पुनर्निवेश के लिए और नवाचारी गतिविधियों के वित्तपोषण के लिए धन की उपलब्धता सुनिश्चित की।
- इंग्लैंड की भौगोलिक अवस्थिति ने भी इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। एक द्वीपीय देश होने के नाते इंग्लैंड बाह्य आक्रमणों से सुरक्षित था। फ्रांस और जर्मनी के विपरीत इंग्लैंड की प्राकृतिक सीमाएँ उसे सुरक्षित बनाती थीं, जिसने उसके लिए शांति पूर्ण परिस्थितियों में रहना संभव बनाया। इसने शासकों को अधिक लोकतंत्र समर्थक बनाया क्योंकि उन्होंने बल प्रयोग की कम आवश्यकता महसूस की क्योंकि वे बाह्य आक्रमण के खतरों से सुरक्षित थे।
- ब्रिटेन में बहुत अच्छे प्राकृतिक बंदरगाह थे। इससे उसके लिए समुद्री पत्तनों का विकास करना संभव हुआ। इस प्रकार इंग्लैंड समुद्री व्यापार से होने वाले मुनाफे से लाभान्वित हुआ।
- इंग्लैंड कोयला और लोहे जैसे प्राकृतिक संसाधनों में भी समृद्ध था।
- इंग्लैंड में सहायक नदियों का बहुत अच्छा प्राकृतिक नेटवर्क था। ये नदियाँ आसानी से नौवहनयोग्य थीं, जिससे वस्तुओं और कच्चे माल का सस्ता परिवहन संभव हुआ।

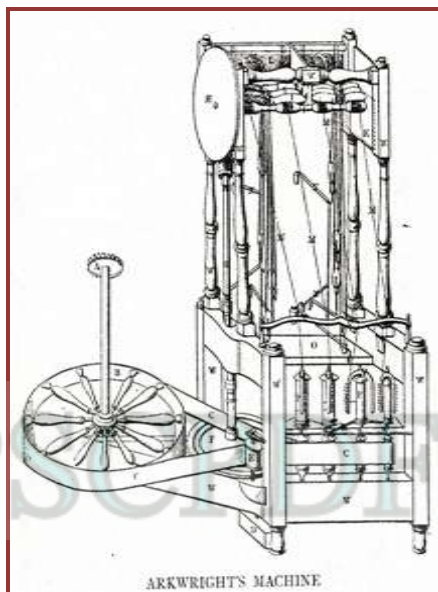
10.4. औद्योगिक क्रांति के घटक

10.4.1. वस्त्र क्षेत्रक में क्रांति

- औद्योगिक क्रांति वस्त्र उद्योग में हुई क्रांति के साथ आरंभ हुई। 17वीं शताब्दी में, ईस्ट इंडिया कंपनी भारत में तैयार सूती कपड़े ब्रिटेन को निर्यात करके बहुत लाभ कमा रही थी और इससे ब्रिटिश व्यापारियों को ईर्ष्या हो रही थी। इसने अंग्रेज व्यापारियों को भारत से कच्चा कपास आयात करने और ब्रिटेन में कपास के कपड़े बनाने के लिए प्रेरित किया ताकि वे कपास की तेज मांग से कुछ लाभ कमा सकें। जब कताई के पहिए और हथकरघा जैसी पुरानी मशीनरी मांग को पूरा नहीं कर सकी तो कई नवोन्मेष हुए। वस्त्र उद्योग में नई मशीनें कच्चे कपास की तेज कताई कर धागा बनाने में सहायता करने लगीं।
- हर्शियस ऐसी मशीन विकसित करने वाले पहले शख्स थे, जिन्होंने 'स्पिनिंग जेनी' नामक चरखे का आविष्कार किया।



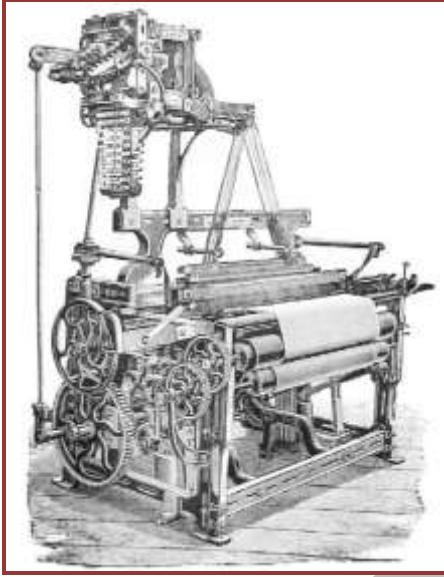
चित्र: स्पिनिंग जेनी



वाटरफ्रेम



- आर्कराइट ने 'वाटरफ्रेम' का आविष्कार किया जिसका संचालन जलशक्ति से किया जाता था। शीघ्र ही, क्रॉम्प्टन ने दोनों मशीनों की विशेषताओं को मिलाकर अपनी अलग मशीन विकसित कर ली। तेज कटाई वाली मशीनों का प्रभाव यह था कि उन्होंने वस्त्र कारखानों को वैसे धागे का उत्पादन करने में सक्षम कर दिया जो महीन और सस्ते थे। उत्पादन लागत में हुई कमी ने लाभ को बढ़ा दिया और शीघ्र ही मशीनें इंग्लैंड में बहुत लोकप्रिय हो गईं।
- इसके अतिरिक्त 1785 में, कार्टराइट ने 'पावरलूम' विकसित किया जिसने वास्तव में धागे से कपड़ा उत्पादन में क्रांति ला दी।



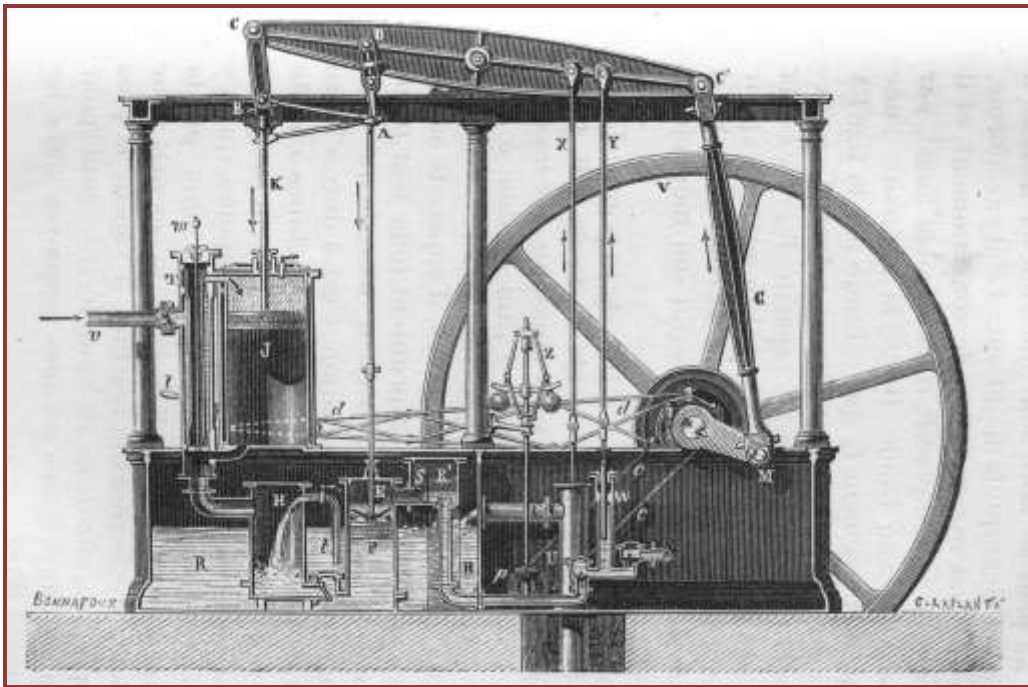
चित्र: पावरलूम

कॉटन जिन

- हॉर्स पावर शब्द का उद्गम कार्टराइट के पावरलूम से ही हुआ है क्योंकि यह मशीन गोलाकार या वृत्तीय पथ पर दौड़ने वाले घोड़ों द्वारा संचालित होती थी। बाद में, पावरलूम को पानी की शक्ति से चलने हेतु संशोधित किया गया। जल विद्युत के उपयोग के लिए कारखानों को नदियों और नहरों के पास स्थापित किया गया था। कॉटन जिन एक अन्य आविष्कार था, जिसने हाथों की तुलना में 300 गुना तेजी से कपास के बीज और फाइबर या धागे को अलग करने की प्रक्रिया विकसित की। 1793 में एली व्हिटनी द्वारा इस मशीन का आविष्कार किया गया था। इसने कपास की गांठों से कपास के तंतु (फाइबर) को अलग करने की हाथ-आधारित धीमी प्रक्रिया के कारण कच्चे कपास के तंतु की आपूर्ति की कमी की समस्या को हल कर दिया।

10.4.2. वाष्प शक्ति/स्टीम पावर

- दूसरा और सबसे महत्वपूर्ण आविष्कार 1769 में जेम्स वाट द्वारा स्टीम या भाप के इंजन का विकास रहा। स्टीम इंजन ने माल के उत्पादन को बढ़ावा दिया और परिणामस्वरूप कच्चे माल की मांग में भारी वृद्धि हुई। ये वास्तविक चीजें थीं, जिससे बड़े पैमाने पर उत्पादन हो सका क्योंकि मानवीय श्रम आधारित या पनबिजली आधारित मशीनें कम कुशल थीं। शीघ्र ही, कटाई मशीन और पावरलूम चलाने के लिए भाप इंजन उपयोग किए गए। इसके परिणामस्वरूप इंग्लैंड ने 1840 तक पांच गुना अधिक कच्चे कपास आयात किए। स्टीम इंजन को कोयला खानों से पानी निकालने लायक बनाया गया, जिससे कोयले की आपूर्ति में वृद्धि हुई।



चित्र: जेम्स वाट का भाप-इंजन

10.4.3. लोहे के उत्पादन में क्रांति

- एक अन्य क्रांति लोहे के उत्पादन में हुई, जिसके परिणामस्वरूप अंततः सभी औद्योगिक प्रक्रियाओं में वृद्धि हुई और मशीनीकरण सस्ता एवं सुलभ हुआ। स्टीम पावर ने अधिक मशीनरी की मांग की थी और इस्पात (स्टील) बनाने के लिए इंग्लैंड में लौह अयस्क और कोयले के भारी भंडार थे। लेकिन जहां इंग्लैंड पीछे था वह था कच्चे लोहे का सस्ता प्रसंस्करण कर पाने की क्षमता। इस समस्या को 'ब्लास्ट फर्नेस' के विकास से हल किया गया, जिसमें चारकोल (काठकोयला) के स्थान पर कोक (पत्थर कोयला) का उपयोग किया जाता था। इसने ब्रिटिश स्टील उद्योग को केवल पिंग आयरन के स्थान पर उच्च-श्रेणी वाले कास्ट आयरन (ढलवा लोहा) का उत्पादन करने में भी सक्षम बनाया।

10.4.4. परिवहन एवं संचार में क्रांति

- अर्थव्यवस्था न केवल उत्पादन की प्रक्रियाओं से सम्बंधित है, बल्कि भूगोल भी इसका एक महत्वपूर्ण भाग है। सम्पूर्ण इंग्लैंड और साथ ही साथ इसके उपनिवेशों में रेल-सड़क नेटवर्क के रूप में परिवहन गलियारों के विकास ने ब्रिटिश उद्योगों को कच्चे माल और तैयार माल की आपूर्ति को तीव्र करने की अनुमति दी। 1814 में जॉर्ज स्टीफेन्सन द्वारा रेलवे में उपयोग के लिए स्टीम इंजन को संशोधित किया गया। अब कोयले को रेलवे के माध्यम से खानों से बंदरगाहों तक पहुंचाया जा सकता था। 1830 में, स्टीम पावर पर चलने वाली पहली यात्री ट्रेन ने अपनी यात्रा आरंभ की। इस आविष्कार ने व्यापारियों और भीतरी प्रदेशों से शहरों तक श्रमिकों के बेहतर आवागमन और वास्तव में एक जुड़ी हुई अर्थव्यवस्था का विकास करने में मदद की। भारत में रेलवे की शुरुआत 1853 में हुई। मैकएडमाइज्ड रोड या पक्की सड़कें मैकएडम के इंजीनियरिंग कौशल का परिणाम थीं। बेहतर सड़कों ने माल की तेज ढुलाई संभव की। रेल-सड़क अवसंरचना को कैनाल नेटवर्क बिल्डिंग द्वारा पूरित किया गया था। भाप चालित जहाजों के उपयोग के कारण जल परिवहन, भू-परिवहन की तुलना में बहुत सस्ता था। डाक सेवाओं के आगमन ने दूर-दराज के स्थानों से व्यापारिक लेन-देन को सकारात्मक रूप से प्रभावित किया।

10.4.5. कृषि क्रांति



- औद्योगिक क्रांति का एक अन्य पहलू भी है जिसे आम तौर पर भुला दिया जाता है, वह है कृषि क्रांति जो औद्योगिक क्रांति के पहले आरंभ हुई थी। इसमें ब्रिटिश उद्योगों की मांगों को पूरा करने के लिए नगदी फसलों का अधिक उत्पादन सम्मिलित था। जमीन की जुताई के लिए इस्पात के हल और हैरो (पट्टे) जैसी नई मशीनरी, मशीनीकृत सीड ड्रिल, घोड़े द्वारा खींचे जाने वाले कल्टिवेटर (जमीन जोतने वाले यंत्र) जिसने हों (फावड़ा या कुदाली) तथा कटाई और मंजाई के लिए प्रयुक्त हो रही मशीनों का स्थान ले लिया और कृषि क्षेत्र में मानव श्रम की आवश्यकता को कम कर दिया। **बाइबंदी आंदोलन** (The Encloser Movement) का नेतृत्व बड़े जमींदारों ने किया था, जिन्होंने संसद में सांसदों के साथ मिलकर सीमांत किसानों और गांवों के छोटे-छोटे भूखंडों पर कब्जा कर अपने कृषि क्षेत्र के दायरे में वृद्धि की। इस प्रकार कस्बों में स्थित उद्योगों के लिए श्रम की उपलब्धता में वृद्धि हुई और श्रम अधिशेष ने श्रम लागत को सस्ता बना दिया जिससे व्यापारियों का लाभ बढ़ गया। इसी प्रकार उर्वरकों का गहन उपयोग और सस्य आवर्तन जैसी खेती की नई परिपाटियों ने मिट्टी की उर्वरता बढ़ा कर ब्रिटेन की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित की।

10.5. औद्योगिक क्रांति का प्रभाव

“कहा जाता है कि पहली क्रांति वह थी जब पाषाण काल में मनुष्य ने शिकार के स्थान पर कृषि और पशुपालन को अपनाया था और यह दूसरी क्रांति है जब कृषि के स्थान पर व्यवसाय को प्रधानता दी गई है।”

- औद्योगिक क्रांति का विभिन्न क्षेत्रों पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। ब्रिटेन की अर्थव्यवस्था पर कृषि क्षेत्र की बजाय औद्योगिक क्षेत्र का वर्चस्व रहा, जिससे सकल घरेलू उत्पाद में कृषि के हिस्से में कमी आई। उच्च सकल घरेलू उत्पाद ने ब्रिटिश व्यवसायों द्वारा वस्त्र के निर्यात और कच्चे माल के आयात को बढ़ाया। अब ब्रिटेन ने स्व-उपभोग और निर्यात के लिए पर्याप्त कोयला और पिग आयरन का उत्पादन किया। औद्योगिक क्रांति ने शीर्ष स्तर की औद्योगिक अर्थव्यवस्था के रूप में ब्रिटेन के उदय का नेतृत्व किया। परंतु लोगों पर इसका प्रभाव बहुत सकारात्मक नहीं था। रोजगार की तलाश में गांवों से शहरों की ओर प्रवास में वृद्धि हुई। अब शहरी क्षेत्र उत्पादन के केंद्र बन गए, वे व्यापार तथा प्रशासन के केंद्र बनने तक सीमित नहीं रहे।
- इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप शहरी भीड़भाड़ में वृद्धि हुई, जिससे आवास और स्वच्छता की समस्याएं बढ़ गईं। शहरी क्षेत्र अब दो असमान हिस्सों में बंट गए थे। एक ओर व्यापारियों और मैनेजर वर्ग के लोगों के शानदार आवास थे तो दूसरी ओर स्लम (मलिन बस्तियां)। प्रवास ने सामाजिक जुड़ाव और नैतिक संयम के विघटन के रूप में सामाजिक तनाव की स्थिति उत्पन्न की। इसके कारण गरीबी के साथ-साथ शहरों में अपराधों में भी वृद्धि हुई। उद्योगपतियों ने मजदूरों को मशीनों के कलपुर्जे और उत्पादन के एक अन्य पहलू के रूप में देखा। उनका उद्देश्य लाभ को अधिकतम करना था और इसलिए मजदूरों को बहुत कम मजदूरी दी जाती थी। श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा और कारखानों में काम करने की स्थिति को बेहतर बनाने हेतु बहुत कम काम किया गया। असुरक्षित मशीनों से बहुत-से लोग घायल हुए। सस्ते वेतन पर उपलब्ध होने के कारण श्रम बल में बाल श्रम और महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि हुई। काम के घंटे प्रति दिन लगभग 15 से 18 घंटे थे।



चित्र: ब्रिटिश औद्योगिक क्रांति के दौरान बाल मज़दूर

- पर्यावरण प्रदूषण के स्तर में भी वृद्धि हो रही थी परिणामस्वरूप श्रमिकों को कई स्वास्थ्य समस्याओं का सामना करना पड़ा। औद्योगिक लांबी ने लंबे समय तक यह सुनिश्चित किया कि मजदूरों के कल्याण के लिए संसद सदस्य कुछ न करें, जिसके कारण मजदूरों में असंतोष उत्पन्न हुआ और इंग्लैंड में औद्योगिक क्रांति के बाद विकसित हुए लुडिट्स और चार्टिस्ट जैसे कई कामगार आंदोलन अस्तित्व में आए। यहाँ यह याद रखना उचित है कि यह औद्योगिक क्रांति के बाद आए पूंजीवाद का एक नकारात्मक पक्ष था, जिसने समाजवाद के आगमन को गति प्रदान की। इंग्लैंड में श्रमिकों की दयनीय स्थितियों ने कार्ल मार्क्स के विचारों को प्रभावित किया। मजदूर वर्ग के बीच व्यापारिक संघवाद में वृद्धि हुई और एकता में वृद्धि हुई।
- एक प्रकार से औद्योगिक क्रांति ने इंग्लैंड में लोकतंत्र के विकास को तीव्र किया। श्रमिकों के बीच बढ़ते असंतोष और परिणामी आंदोलनों ने सरकार को सचेत किया कि लेसेज़ फेयर (अहस्तक्षेप की नीति) का सिद्धांत सही नहीं है और यदि पूंजीवादी व्यवस्था को श्रमिक क्रांति से सुरक्षित रखना है तो राज्य को कमजोर वर्गों की रक्षा करने की जिम्मेदारी उठानी पड़ेगी।
- धीरे-धीरे, चार अधिनियमों के पारित होने के साथ, मतदान का अधिकार कामगारों सहित समाज के कई वर्गों तक बढ़ा दिया गया और 1929 तक ब्रिटेन ने सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार को अपना लिया। व्यापार संघों को 1824 में वैध कर दिया गया और कारखाना अधिनियमों की एक श्रृंखला पारित की गई, जैसे 1802 और 1819 में, जिसने आयु और काम के घंटे पर प्रतिबंध लगाया और रोजगार की स्थिति (विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों की) को विनियमित किया।
- औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप औद्योगिक और गैर-औद्योगिकीकृत दुनिया के बीच संपर्क बढ़ा। लेकिन यह संपर्क समानता पर आधारित नहीं था। कच्चे माल की आवश्यकता तथा तैयार माल के निर्यात हेतु बाजार की खोज ने कई यूरोपीय देशों को औपनिवेशिक देश बनने के लिए प्रेरित किया।



19वीं सदी में जब शेष यूरोप में औद्योगिक क्रांति का आरम्भ हुआ, तो वहीं दूसरी ओर अन्य कई यूरोपीय राष्ट्रों के बीच उपनिवेशों के लिए होड़ लगी थी। इस प्रकार औद्योगिक क्रांति ने साम्राज्यवाद के उभरने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जिसके कारण औपनिवेशिक शक्तियों ने मध्यस्थों द्वारा सैन्य शक्ति, प्रत्यक्ष नियम और शासन के उपयोग से उपनिवेशों पर अधिक मजबूत नियंत्रण स्थापित करने की कोशिश की। कई उपनिवेशों को औपनिवेशिक शक्तियों द्वारा अपने क्षेत्र का विस्तार माना जाता था।

10.6. इंग्लैंड के बाहर औद्योगिक क्रांति का प्रसार

- 1815 में नेपोलियन के युद्धों के अंत के पश्चात् यूरोप में एक ऐसा वातावरण उत्पन्न हुआ जिसमें राष्ट्र औद्योगिक विकास पर ध्यान केंद्रित कर सकते थे। 1815 के बाद कई यूरोपीय राष्ट्रों में मशीनों का आगमन हुआ, लेकिन लोकतंत्र, स्वतंत्रता और प्रदेशों के एकीकरण के लिए आंदोलन ने 1871 तक औद्योगिक क्रांति को जड़ जमाने की इजाजत नहीं दी। फ्रांस में 1850 तक लौह-इस्पात के उद्योग विकसित होना आरंभ हो चुके थे, लेकिन कोयला और लौह अयस्क के रूप में कच्चे माल की कमी ने इसकी प्रगति को बाधित किया।
- जर्मनी, इस्पात के उत्पादन में ब्रिटेन के बाद दूसरे स्थान पर था, लेकिन अब भी ब्रिटेन से काफी पीछे था। बिस्मार्क के नेतृत्व में जर्मन एकीकरण के बाद, जर्मन उद्योग कई गुना विकसित हुए और शीघ्र ही पिग आयरन और कोयले के उत्पादन में अंग्रेजों के प्रतिद्वंद्वी बन गए। 1871 में इटली के एकीकरण के उपरांत इटली में औद्योगिक क्रांति का आरंभ हुआ। रूस में औद्योगिकीकरण सबसे अंत में हुआ।
- रूस प्राकृतिक संसाधनों में समृद्ध था, लेकिन पूंजी की कमी और दासता एवं निःशुल्क श्रम के कारण इसके औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया धीमी थी। जब दासता को 1861 में समाप्त कर दिया गया तब रूसी औद्योगिक उत्पादन को बढ़ावा मिला। इसने विदेश से पूंजी उधार ली, लेकिन 1917 की अक्टूबर क्रांति के बाद ही रूस में वास्तविक औद्योगिक क्रांति आ पाई।
- यूरोप के बाहर, 1783 में ब्रिटेन से स्वतंत्रता के बाद अमेरिका में उद्योग विकसित हो रहे थे। लेकिन वणिकवाद या वाणिज्यवाद (मर्केटलिज़्म) की ब्रिटिश नीति ने स्वदेशी उद्योग के विकास को बाधित किया था और अमेरिका क्षेत्रीय विस्तार की अपनी राजनीतिक उथल-पुथल के साथ-साथ राष्ट्रपति लिंकन द्वारा दासता पर प्रतिबंध लगाने के कारण गृह युद्ध में फंसा हुआ था। अतः यहां 1870 के पश्चात् ही औद्योगिक उत्पादन को बढ़ावा मिला। अमेरिका तब एक औद्योगिक शक्ति के रूप में उभरा और द्वितीय विश्व युद्ध तक शेष विश्व के लिए तैयार वस्तुओं का एक प्रमुख आपूर्तिकर्ता बना रहा।
- **जापान** एशिया का पहला देश था जहां सर्वप्रथम औद्योगिकीकरण हुआ। यहां औद्योगिक क्रांति बहुत देर से लगभग 19वीं शताब्दी में हुई। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद इसने 'Little is the Best' को अपना मूलमंत्र बना लिया। यह रेशम, खिलौने और चीनी मिट्टी के बर्तन के पारंपरिक निर्यातक से इस्पात मशीनरी, धातु की वस्तुएं और रसायनों का प्रमुख निर्यातक बन गया।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि राजनीतिक व्यवस्था, राजनीतिक स्वतंत्रता, आक्रमण से सुरक्षा, श्रम और कानून व्यवस्था के साथ पूंजी की उपलब्धता आदि औद्योगिक क्रांति के प्रमुख निर्धारक थे। ब्रिटेन में सबसे पहले औद्योगिकीकरण इसलिए नहीं हुआ कि इसके पास बेहतर बुद्धिजीवी थे बल्कि उपर्युक्त तथ्यों के अनुकूल परिस्थितियों के विद्यमान होने के कारण ऐसा संभव हुआ। जब ये परिस्थितियां अन्य देशों में भी आईं तो उन्होंने भी शीघ्र ही औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया आरंभ कर दी।

11. उपनिवेशवाद की परिभाषा

- किसी एक क्षेत्र के लोगों द्वारा किसी अन्य क्षेत्र में उपनिवेशों की स्थापना, उनका शोषण, रख-रखाव, दूसरे क्षेत्रों का अधिग्रहण और विस्तार उपनिवेशवाद कहलाता है। यह सामान्यतः औपनिवेशिकों एवं मूलनिवासियों तथा उपनिवेश एवं औपनिवेशिक शक्ति के मध्य असमान संबंधों का एक समुच्चय है।

12. उपनिवेशवाद का इतिहास

12.1 भौगोलिक खोज या अन्वेषण की भूमिका

- सामंतवाद की समाप्ति के साथ-साथ 15वीं सदी के अंत में हुए अन्वेषणों या खोजी यात्राओं ने उपनिवेशवाद के उदय में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 13वीं सदी के आरंभ में इटली के मार्को पोलो ने चीन की यात्रा की।



- व्यापारिक लाभ ने यूरोपीय बंदरगाहों के महत्व को बढ़ा दिया और व्यापारियों ने इसे अपनी गतिविधियों का केंद्र बनाया। शीघ्र ही भू-मध्य सागर के तटीय इलाकों में नए शहरों का विकास हुआ और वेनिस तथा जेनोवा जैसे शहरों की समृद्धि में वृद्धि हुई। ये तटीय शहर सामंतवाद आधारित ग्रामीण प्रणाली से स्वतंत्र थे। इन कस्बों में कृषिदास स्वतंत्र थे और इसलिए गांवों से शहरों की तरफ प्रवास तीव्र हो गया। इन तटीय शहरों का आधार पैसा था न कि भूमि। राजा, जो सामंत प्रणाली में अधीनस्थ सामंतों या सरदारों पर सैन्य सहायता के लिए निर्भर थे, उन्होंने सामंतों और चर्च की शक्तियों का तिरस्कार किया और व्यापारियों की यात्राओं का वित्त पोषण कर उन्हें संरक्षण प्रदान किया। इसके बदले सामंती नियंत्रण से बचने हेतु व्यापारियों ने राजा को सहायता प्रदान की और व्यापारियों की स्थिति (दर्जा) समाज में थोड़ी बेहतर हुई और इन्हें राजनीतिक अधिकार प्राप्त हुए।
- मौद्रिक लाभ अन्वेषण का सबसे महत्वपूर्ण कारण बन गया क्योंकि खोजी यात्री अपने शहर/देश में बहुत अधिक लाभ पर बेची जा सकने वाली वस्तुएँ लेकर लौटते थे। उदाहरण के लिए वास्को-डी-गामा (1498) ने वेनिस की अपेक्षा भारत में काली मिर्च का मूल्य 1/20 गुना तक कम पाया। मसालों का व्यापार सबसे आकर्षक था। 13वीं शताब्दी के मध्य तक मसालों के प्राथमिक व्यापारिक बंदरगाह के रूप में वेनिस का उदय हुआ। मसालों को वेनिस से पश्चिमी और उत्तरी यूरोप में ले जाया गया। वेनिस (*उल्लेखनीय है कि 14वीं सदी का पुनर्जागरण सर्वप्रथम इटली में ही आरंभ हुआ) उच्च प्रशुल्क लेकर अत्यंत समृद्ध बन गया।



- मध्य-पूर्व तक प्रत्यक्ष पहुंच न होने के कारण यूरोपियों को वेनिस द्वारा आरोपित उच्च मूल्य का भुगतान करने के लिए मजबूर किया गया। यहां तक कि अमीरों को भी मसालों के उच्च मूल्य का भुगतान करने में परेशानी होती थी। पूर्व के मार्गों को **सिल्क रूट्स** के नाम से जाना जाता था। वेनिस के अतिरिक्त बैजेन्टाइन साम्राज्य की राजधानी कांस्टेंटिनोपल (कुस्तुन्तुनिया) ने भी पूर्व के साथ व्यापार में मध्यस्थ की भूमिका निभाई। ये दोनों शहर व्यापार मार्गों पर स्थित थे और अपनी इच्छानुसार इस व्यापार को रोकने की शक्ति इनमें थी। 1453 में ऑटोमन साम्राज्य ने बैजेन्टाइन साम्राज्य को हरा दिया और समुद्री मार्गों को अवरुद्ध कर दिया।



अन्वेषण युग से पूर्व के मार्ग: वर्ष 1453 में बैजेन्टाइन साम्राज्य के पतन के बाद ऑटोमन साम्राज्य द्वारा आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण सिल्क रोड (भू-मार्ग) और मसाला मार्ग (जल-मार्ग) बंद किए जाने के पश्चात् अफ्रीका के आस-पास से हो कर जाने वाले समुद्री मार्गों का अन्वेषण प्रोत्साहित हुआ और इसने अन्वेषण युग को सक्रिय किया।



अन्वेषण युग से पश्चात् के मार्ग: 16वीं शताब्दी में अन्वेषण युग के दौरान की जाने वाली खोजों के कारण पुर्तगाल (गहरा) और स्पेन (ग्रे) समुद्री व्यापारिक मार्गों को दर्शाता मानचित्र।

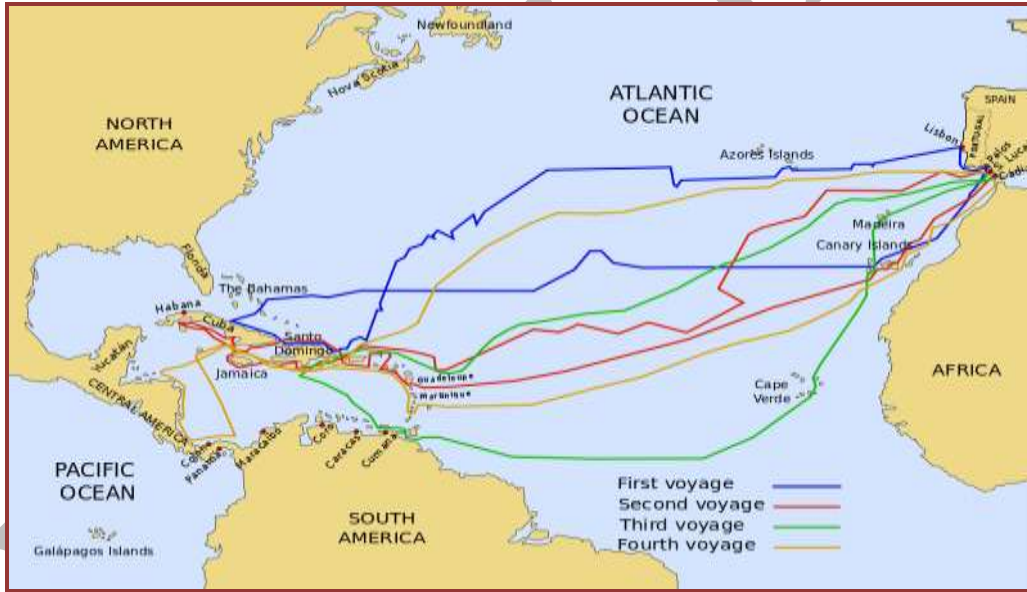
- इसने 15वीं सदी के अंत में यूरोपीय यात्रियों की खोजी यात्राओं का मार्ग प्रशस्त किया। इस प्रकार 16वीं सदी से पहले ही इटली ने वैश्विक व्यापार पर अपना प्रभुत्व जमा लिया। इसका कारण उसकी

भौगोलिक अवस्थिति और वाणिज्यिक समुद्री मार्गों के संबंध में ज्ञान पर एकाधिकार था। लेकिन शीघ्र ही समृद्ध इतालवी व्यापारिक शहरों के प्रति ईर्ष्या और ऑटोमन साम्राज्य द्वारा की गई नाकेबंदी के कारण नाविकों ने पूर्व के लिए एक वैकल्पिक मार्ग खोजने के उद्देश्य से यात्राएँ आरंभ कीं। उत्तर-पश्चिम में मार्ग खोजने के लिए की गई एक यात्रा से कनाडा की खोज हुई। यह खोज ब्रिटेन के जॉन काबोट द्वारा की गई थी। अन्वेषण के साथ धीरे-धीरे दुनिया का भौगोलिक मानचित्र उभरा।

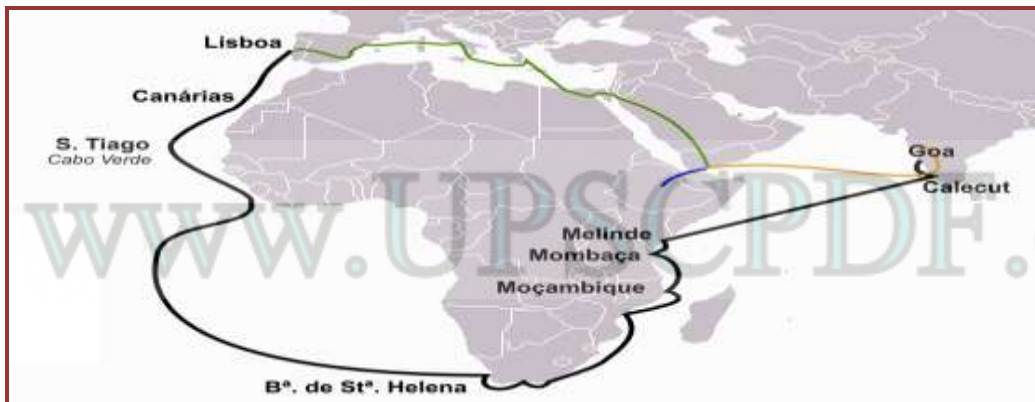


12.2. तकनीकी नवोन्मेष

- तकनीकी नवाचारों ने नई भूमि की खोज करने में खोजकर्ताओं की सफलता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 15वीं सदी के अंत तक कम्पास, एस्ट्रैलेब (एक यंत्र जो जहाज के स्थान का निर्धारण करने में मदद करता है), मानचित्रण की कला और लंबे समय तक यात्रा कर सकने में सक्षम बेहतर जहाज आदि का विकास हुआ। इन नवोन्मेषों ने किसी भी अन्वेषक के समुद्र संबंधी भौगोलिक ज्ञान को बढ़ाया। वे समुद्री मार्गों के सटीक मानचित्रों को विकसित करने में सक्षम थे और मौसम प्रणाली से परिचित थे जिसने उन्हें नई भूमि तक सुरक्षित रूप से पहुंचने में सक्षम बनाया।
- इस प्रकार 15वीं सदी के अंत के आसपास की अवधि को अन्वेषण युग के रूप में जाना जाने लगा। स्पेन द्वारा वित्त पोषित क्रिस्टोफर कोलंबस भारत की खोज में निकला था, लेकिन 1492 में वह मध्य अमरीका में हैती के तट पर उतरा। उसने इसे भारत समझ लिया और यही कारण है कि उसने यहाँ के निवासियों को इंडियन और इस द्वीप को इंडीज नाम दिया।



1498 में पुर्तगाल द्वारा वित्तपोषित वास्को डी गामा ने भारत की खोज की। वह केप ऑफ गुड होप (दक्षिण अफ्रीका) के रास्ते यूरोप से भारत आया।





- 1500 ई. के आसपास अमेरिगो वेस्पुसी (कोलंबस नहीं) ने अमेरिका की खोज की थी। पुर्तगालियों ने भी दक्षिण-पूर्व एशिया में फिलीपींस की खोज की।
- इन खोजों से औपनिवेशीकरण का आरंभ हुआ। खोजी गई नई भूमियाँ खनिज संसाधनों से समृद्ध थीं और यहाँ कई उत्कृष्ट प्राकृतिक बंदरगाह थे, जिन्हें पत्तनों के रूप में विकसित किया जा सकता था। इस प्रकार ये व्यापार के नोडल बिंदु के रूप में कार्य कर सकते थे। यूरोपीय व्यापारियों ने यहाँ अपने प्रतिष्ठानों की स्थापना का प्रयास किया और इन खोजी गई नई भूमियों में उपनिवेश बनाने लगे।
- अमेरिका, एशिया और अफ्रीका की नई भूमियों से आयात की गई वस्तुओं से प्राप्त लाभ ने अन्वेषण हेतु एक होड़ आरम्भ की और शीघ्र ही डच, फ्रेंच और ब्रिटिश भी स्पेन और पुर्तगाल के साथ इस होड़ में शामिल हो गए।

13. औपनिवेशीकरण (Colonization)

- एशिया, अफ्रीका और अमेरिका का औपनिवेशीकरण तीन बातों को ध्यान में रख कर आरंभ हुआ- गोल्ड, ग्लोरी और गॉड (3G)। गोल्ड अर्थात् सोना व्यापार से होने वाला लाभ ग्लोरी अर्थात् प्रतिष्ठा जो उस मान्यता की प्रतिनिधि थी जो एक यूरोपीय शक्ति विश्व की सर्वोच्च शक्ति के रूप में प्राप्त करती थी। किंगडम के झंडे के साथ मिशनरी भी आए जिनका कार्य ईसाई धर्म (गॉड) को बढ़ावा देना था।
- यहां यह ध्यातव्य है कि जिस देश का प्रभुत्व समुद्र पर था उसी ने औपनिवेशिक युग में सर्वाधिक लाभ प्राप्त किया। व्यापारिक जहाजों का बड़ा बेड़ा व्यापार की मात्रा और बाहरी बाजारों में फैलाव का परिचायक था, जबकि एक मजबूत नौसेना उसकी रक्षा कर सकती थी, प्रतियोगियों के जहाजों पर हमला कर सकती थी और वाणिज्यिक समुद्री मार्गों को अवरुद्ध कर सकती थी। वे देश जो पोर्ट्स ऑफ कॉल के रूप में मैत्रीपूर्ण बंदरगाह पाने में समर्थ थे वे व्यापारिक प्रतियोगिता में लाभपूर्ण स्थिति में होते थे। यहां उनके जहाज ईंधन भर सकते थे और चालक दल आराम कर सकते थे। इस प्रकार वाणिज्यिक पूंजीवाद, उपनिवेशवाद के साथ-साथ बढ़ा और उपनिवेशवाद ने वाणिज्यिक पूंजीवाद को फलने-फूलने हेतु एक सुरक्षित क्षेत्र प्रदान किया। उल्लेखनीय है कि उपनिवेशवाद के साथ कई नई वस्तुएँ व्यापार टोकरी (ट्रेड बास्केट) में आईं। आलू, तम्बाकू, मक्का तथा मसाले जैसे उत्पादों का व्यापार शुरू हुआ जिनके बारे में यूरोपीय अभी तक अनभिज्ञ थे। यूरोपीय कारखानों के लिए उपनिवेशों ने कच्चे माल के स्रोत के रूप में कार्य किया। उदाहरण के लिए अमेरिका में गन्ने के बागानों की स्थापना ने चीनी उद्योग को बढ़ावा दिया। इसी प्रकार चावल, कॉफी और कपास जैसे संसाधनों का भी दोहन किया गया।
- यूरोपीय देशों ने नई खोजी गई भूमि के तटीय क्षेत्रों में व्यापारिक पोस्ट्स की स्थापना की। वाणिज्यिक पूंजीवाद की नीति में अन्य राज्यों के व्यापारिक जहाजों पर हमला, व्यापारिक मार्गों में अवरोध, उपनिवेशों की स्थापना, व्यापारिक बाधाएं पैदा करना, उपनिवेशों के साथ व्यापार एकाधिकार शामिल था। यदि उपनिवेश स्थापित करने में असमर्थ हों तो नई खोजी गई भूमि के साथ विशेष व्यापार अधिकारों को सुरक्षित करना था ताकि व्यापारिक एकाधिकार पाया जा सके। पुर्तगालियों ने 1498 में केप ऑफ गुड होप के माध्यम से भारत के लिए व्यापार मार्ग की खोज के बाद एशिया के साथ व्यापारिक एकाधिकार स्थापित कर लिया और इसने पूर्व के व्यापार पर इतालवी एकाधिकार को प्रतिस्थापित कर दिया। बाद में, पुर्तगालियों को इंडोनेशिया में डच और भारत में अंग्रेजों ने प्रतिस्थापित किया। इसके बाद, सैन्य शक्ति और समुद्री शक्ति में वृद्धि ने फ्रांस और ब्रिटेन को बड़ी औपनिवेशिक शक्तियों के रूप में उभरने में सहायता की।

14. उपनिवेशवाद का प्रभाव



- एक तरफ यूरोपीय देशों ने व्यापार की मात्रा और विविधता में बहुत तीव्र वृद्धि देखी तो वहीं दूसरी ओर उपनिवेशों को उनके संसाधनों से दूर कर दिया गया। यूरोप ने मसालों जैसे उत्पादों का आयात करना आरंभ कर दिया, जो कि इसके बाजार के लिए नए थे और बहुत ही शीघ्र ये लोकप्रिय हो गए। इसी प्रकार पूर्व से सूती कपड़े आयातित किये गये।
- स्पेन ने मध्य अमेरिकी उपनिवेशों में गन्ने के बागान स्थापित किए जबकि पुर्तगाल ने ब्राजील में बागानी प्रणाली को स्थापित किया। हॉलैंड जैसा देश जिसकी आंतरिक भूमि बंजर थी, उसने ब्रिटेन और अन्य यूरोपीय देशों को व्यापार के लिए जहाज प्रदान कर उपनिवेशों से भारी लाभ कमाया। दूसरी ओर उपनिवेशों पर उपनिवेशवाद का प्रभाव भयावह था। अमेरिगो की यात्रा के बाद दक्षिण अमेरिका को स्पेन ने उपनिवेश बना लिया, जिसने इस यात्रा को वित्त पोषित किया था। एज़टेक और इंका सभ्यता को नष्ट कर दिया गया और उनके सोने-चांदी को लूट लिया गया। वहां के मूल निवासियों को उपनिवेशवादियों के हित में खानों और खेतों में काम करने के लिए मजबूर किया गया। पेरू, बोलिविया और मैक्सिको की खानों का दोहन किया गया और प्राप्त सारा धन स्पेन भेज दिया गया।
- बाद में डच, ब्रिटिश और फ्रेंच भी अमेरिका के कुछ हिस्सों को नियंत्रित करने आए। एशिया में उपनिवेशवाद का उद्देश्य व्यापारिक लाभ कमाना था, जबकि अफ्रीका के मामले में दास व्यापार उपनिवेशवाद का मुख्य कारण था। **अफ्रीका में**, औपनिवेशीकरण जल्द आरंभ हुआ लेकिन भौगोलिक बाधाओं के कारण यह तटीय क्षेत्रों तक ही सीमित रहा और इसका विस्तार अफ्रीका की मुख्य भूमि तक नहीं हो सका।
- **दास व्यापार पुर्तगाल द्वारा आरंभ किया गया था** क्योंकि बागानों में लगे इसके कामगार ब्राजील की गर्म और आर्द्र जलवायु सहन करने में सक्षम नहीं थे। इसने काले अफ्रीकियों को ढूंढा जो शारीरिक रूप से मजबूत और भूमध्यरेखीय जलवायु में रहने के अभ्यस्त थे। उन्हें बागानों में काम करने के लिए लाया जाता था। अफ्रीकी, गुलामों के रूप में बागानों में काम करते थे तथा मूल अमेरिकी उपनिवेशवादियों के कृषि क्षेत्रों पर कृषि दासों की भांति कार्य करते थे। औपनिवेशीकरण के बाद शीघ्र ही उत्तरी अमेरिका, वेस्टइंडीज और अमेरिका के अन्य भागों में यूरोपीय शक्तियों द्वारा दास व्यापार आरंभ हो गया। स्पेन ने सर्वप्रथम कैरेबियाई क्षेत्र के हैती में दास व्यापार आरंभ किया और फिर फ्लोरिडा, मैक्सिको, चिली और तटीय दक्षिण अमेरिका के अन्य भागों में बागानी प्रणाली का उपयोग मुख्य रूप से गन्ना, तम्बाकू और कपास के उत्पादन के लिए किया गया। दास व्यापार को ट्रांस-अटलांटिक दास व्यापार के रूप में जाना गया। अमेरिका, अफ्रीका, और यूरोप के त्रिकोण के रूप में त्रिभुजीय दास व्यापार की शुरुआत हुई और अफ्रीकियों को अटलांटिक पार अमेरिका भेजा गया। 15वीं सदी के अंत में जब दास व्यापार की शुरुआत हुई तब यह व्यापार मुख्यतः निजी व्यापारियों, नाविकों और समुद्री डाकुओं द्वारा किया जाता था। परन्तु 16वीं सदी के अंत तक इस व्यापार के लिए दास व्यापार कंपनियों की स्थापना हो गई। आरंभ में काले अफ्रीकियों को तटीय अफ्रीका से पकड़ा जाता था क्योंकि अंदरूनी भाग पहुंच से बाहर थे, लेकिन 19वीं सदी में मुख्य भूमि के अन्वेषणों के पश्चात् सम्पूर्ण अफ्रीका से दास पकड़े जाने लगे। अटलांटिक पार करने की यात्रा काफी अमानवीय थी। भीड़ और स्वच्छता की कमी के कारण इन यात्राओं के दौरान कई अफ्रीकियों की मृत्यु हो जाती थी।
- 1750 के बाद औद्योगिक क्रांति ने इंग्लैंड में कच्चे माल की मांग में वृद्धि की। उपनिवेशों से कच्चे माल की आपूर्ति बढ़ाने और ब्रिटेन के बढ़ते औपनिवेशिक साम्राज्य के कारण दास व्यापार में खरीद-फरोख्त किए जाने वाले अफ्रीकियों की संख्या में भी वृद्धि हुई। ब्रिटेन के उपनिवेश वेस्टइंडीज में 100 वर्षों में लगभग 2 मिलियन गुलाम आयात किए गए। अमेरिका का वर्तमान जनसांख्यिकीय संघटन 16वीं सदी से 19वीं सदी के मध्य किए गए अत्यधिक दास व्यापार का सूचक है।



- 1789 में फ्रांसीसी क्रांति के बाद फ्रांस में दास प्रथा समाप्त हो गई क्योंकि क्रांति मुख्यतः स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के विचारों पर आधारित थी। ब्रिटेन ने 1833 में अपने सभी उपनिवेशों में दासता समाप्त करने के लिए दासता उन्मूलन अधिनियम पारित किया। संयुक्त राज्य अमेरिका में गृह युद्ध (1861-65) के बाद इसे प्रतिबंधित कर दिया गया। दासता पर प्रतिबंध का कई धड़ों द्वारा विरोध किया गया। दक्षिण अफ्रीका के डच औपनिवेशकों ने प्रतिबंध का विरोध किया। इसके अतिरिक्त दासता के मुद्दे पर संयुक्त राज्य अमेरिका की संघीय सरकार और दक्षिणी राज्यों के बीच अमेरिका में भी गृहयुद्ध लड़ा गया। दक्षिणी राज्यों ने दासता पर प्रतिबंध का विरोध ही नहीं किया अपितु USA द्वारा अधिग्रहीत नए क्षेत्रों में भी दासता के विस्तार का प्रयास किया।

15. उपनिवेशवाद और वाणिज्यिक पूंजीवाद में संबंध

(Relation between Colonialism and Mercantile Capitalism)

- वाणिज्यिक पूंजीवाद 18वीं सदी में ब्रिटेन की एक प्रमुख नीति थी। इसके पीछे विचार यह था कि राष्ट्रीय शक्ति में वृद्धि के लिए सरकार को घरेलू अर्थव्यवस्था और उपनिवेशों को विनियमित करना चाहिए। इस विनियमन का उद्देश्य व्यापार अवरोध उत्पन्न करना एवं उपनिवेशों पर व्यापारिक एकाधिकार स्थापित करना था ताकि भुगतान संतुलन को सकारात्मक बनाए रखा जा सके। व्यापारी यूरोप के बाहर के देशों के साथ मुक्त व्यापार समझौता और व्यापारिक एकाधिकार चाहते थे। वहां के स्थानीय प्रमुखों और शासकों द्वारा विरोध करने पर इन देशों को उपनिवेश बना लिया गया।
- 19वीं सदी में, एक नया विकास हुआ। एडम स्मिथ जैसे विचारकों के कारण, **लेसेज़ फेयर** नीति का कार्यान्वयन आरंभ कर दिया गया। इस नीति के अंतर्गत आर्थिक क्षेत्र में राज्य का हस्तक्षेप कम करने और एक मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था का निर्माण करने की संकल्पना निहित थी। यह केवल घरेलू अर्थव्यवस्था में मुक्त बाजार के लिए थी। संपूर्ण विश्व को मुक्त बाजार में परिवर्तित नहीं किया जा रहा था (जैसा कि आज, बहुराष्ट्रीय कंपनियों और वैश्वीकरण के युग में है)। साम्राज्यिक शक्तियों को उनके अधिकांश उपनिवेशों पर व्यापार और निवेश के क्षेत्रों में विशेषाधिकार प्राप्त थे। अन्य देशों की कंपनियों को इन उपनिवेशों में समान अधिकार नहीं प्राप्त थे और साम्राज्यिक देश से संबंधित कंपनियों के लिए आर्थिक परियोजनाओं के अनुबंध सुरक्षित थे। 19वीं सदी के अंत तक **लेसेज़ फेयर** को अस्वीकार कर दिया गया। ब्रिटिश अर्थशास्त्री कीन्स ने 1929 में **द एंड ऑफ़ लेसेज़ फेयर** प्रकाशित किया। **लेसेज़ फेयर** की समाप्ति इसकी कमियों के कारण ही हुई, जैसे कर्मचारियों का अत्यधिक शोषण और अकाल जैसी विभत्स आपदाओं में भी सरकार द्वारा कोई हस्तक्षेप न किया जाना (भारत में 1880 के अकाल में भी सरकार ने हस्तक्षेप नहीं किया था)। यह अनुभव किया गया कि **लेसेज़ फेयर** का पालन आंख बंद कर नहीं किया जा सकता है और राज्य को बुनियादी मानवाधिकारों को सुनिश्चित करने के लिए हस्तक्षेप करना होगा।

16. उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद के बीच अंतर

(Difference between Colonialism and Imperialism)

- उपनिवेशवाद साम्राज्यवाद का ही एक अंग है। औद्योगिक क्रांति के युग में साम्राज्यवाद वस्तुतः उपनिवेशवाद का एक स्वाभाविक विस्तार था। विदेशी क्षेत्र का राजनीतिक अधिग्रहण साम्राज्यवाद की एक आधारभूत विशेषता थी। कुछ लेखकों के अनुसार, सैन्यवाद (जिसका तात्पर्य एक क्षेत्र पर कब्जा करने के लिए आक्रमण करना है) साम्राज्यवाद के लिए आवश्यक है या यह साम्राज्यवाद का ही एक रूप है (क्योंकि राजनीतिक अधिग्रहण एक क्षेत्र पर विजय प्राप्त करने या किसी पर हमले के बिना हो सकता है, लेकिन क्षेत्र पर कब्जा करने के लिए सैन्यशक्ति का प्रयोग किया जाता है)। इसके विपरीत उपनिवेशवाद का अर्थ है लोगों के जीवन और संस्कृति पर अधिकार।



- उपनिवेशवाद का मुख्य लक्ष्य उपनिवेशों का आर्थिक दोहन करना था जबकि साम्राज्यवाद के अंतर्गत राजनीतिक नियंत्रण शामिल होता है। इस प्रकार उपनिवेशवाद उन कंपनियों द्वारा किया जा सकता है जो विशेष व्यापारिक विशेषाधिकार रखती हैं और व्यापारिक केन्द्रों की स्थापना करती हैं, जबकि साम्राज्यवाद राज्य द्वारा सरकार की कूटनीति के माध्यम से प्रदेशों, संरक्षित क्षेत्रों और प्रभाव क्षेत्रों को प्राप्त करने और औद्योगिक व्यापार और निवेश को बढ़ावा देने के लिए किया जाता है।
- उपनिवेशवाद का परिणाम राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक क्षेत्रों में मूलनिवासियों के जीवन पर नियंत्रण होता है, जबकि साम्राज्यवाद अधिक औपचारिक और आक्रामक होता है।
- उपनिवेशवाद एवं साम्राज्यवाद के बीच के अन्तर को कई इतिहासकार औद्योगिक क्रांति से जोड़ कर देखते हैं तथा औद्योगिक क्रांति को दोनों के बीच एक विभाजन रेखा मानते हैं। औद्योगिक क्रांति के बाद औपनिवेशिक साम्राज्य निर्माण की घटनाओं को **नव साम्राज्यवाद** का नाम दिया जाता है। अब प्रश्न उठता है कि **इसमें नया क्या था?** यूरोप में औद्योगिक क्रांति के बाद आरंभ हुए नव साम्राज्यवाद में होड़ या रेस का घटक नई बात थी। औपनिवेशिक प्रक्रिया के प्रत्येक पहलू में भी वृद्धि हुई। इस होड़ ने यूरोपीय शक्तियों द्वारा जितना संभव हो सके, उतने उपनिवेशों को अधिग्रहीत करने की आर्थिक प्रतिस्पर्धा को दर्शाया। यह कच्चे माल के स्रोतों और निर्यात बाजारों के लिए होड़ थी, जिसे उपनिवेशों द्वारा प्रदान किया जाना था। यह व्यापार के लिए अन्य राष्ट्रों के साथ संधि के द्वारा या *पोर्ट ऑफ कॉलस* को उपनिवेश बना कर समुद्री गलियारे सुरक्षित कर वाणिज्यिक जहाजों को सुरक्षित बंदरगाह उपलब्ध कराने की भी होड़ थी। होड़ के इस घटक में नौसैनिक वर्चस्व और स्थलीय सैन्य बलों को स्थापित करने की होड़ भी सम्मिलित थी। **लेकिन होड़ की यह परिघटना पहले इतने स्पष्ट रूप में क्यों नहीं हुई?** इसका उत्तर औद्योगिक क्रांति जैसे कारकों में है, जो 19वीं सदी में शेष यूरोप, अमेरिका और जापान में फैली।
- राष्ट्रवाद का उदय भी एक अन्य कारक है जिसने आर्थिक और सैन्य वर्चस्व की तलाश हेतु राष्ट्रीय प्रतिद्वंद्विता को बढ़ावा दिया और साथ ही घटता हुआ भू-क्षेत्र भी इसका कारण था।
- अंतिम कारक दिलचस्प है और वैश्विक शांति पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है। पहले यूरोपीय शक्तियों द्वारा उपनिवेश स्थापित करने के लिए पर्याप्त भू-भाग थे, लेकिन 19वीं सदी में अफ्रीका के अंदरूनी भू-भाग को छोड़ कर लगभग संपूर्ण विश्व एक या दूसरे शक्तिशाली राष्ट्र के प्रभाव में आ चुका था। इस प्रकार अब दुनिया की प्रमुख शक्तियाँ एक दूसरे की कीमत पर ही आगे बढ़ सकती थीं। एक देश के जो भी उपनिवेश थे उनकी रक्षा के लिए कड़ी प्रतिस्पर्धा थी और साथ ही साथ अन्य उपनिवेशों से प्रतिद्वंद्वी औपनिवेशिक शक्ति को प्रतिस्थापित करने का प्रयास भी किया जा रहा था। नव साम्राज्यवाद में औपनिवेशिक शक्तियों को अपनी औपनिवेशिक संपत्तियों की रक्षा और अपनी सीमाओं को सुरक्षित करने के लिए अधिक बल का उपयोग करना पड़ा। इसने उपनिवेशों में आर्थिक नियंत्रण सुनिश्चित करने के लिए राजनीतिक नियंत्रण को अधिक अनिवार्य बनाया। राजनीतिक नियंत्रण को सुरक्षित रखने के लिए सेना की आवश्यकता थी और इस प्रकार नव साम्राज्यवाद की एक अद्भुत विशेषता राष्ट्रीय शक्ति का उदय थी। ईस्ट इंडिया कंपनी जैसी व्यापारिक कंपनियां धीरे-धीरे अपनी सरकारों द्वारा प्रतिस्थापित कर दी गईं।

17. नव साम्राज्यवाद (New Imperialism) की परिभाषा

- साम्राज्यवाद, औद्योगिक देशों द्वारा गैर-औद्योगिक देशों पर राजनीतिक और आर्थिक वर्चस्व या उनका शोषण है। यह वर्चस्व सैन्य विजय या विदेशी क्षेत्र को उपनिवेश बना कर प्राप्त किया जा सकता है अर्थात् विदेशी भूमि को जीतना और उन्हें स्वयं पर निर्भर बनाना। विदेशी शासक अल्पसंख्यक होते हुए भी देशी लोगों पर अपनी जाति और संस्कृति की श्रेष्ठता थोपते हैं।



- साम्राज्यवाद के प्रमुख घटकों को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है:
 - कच्चा माल और निर्यात बाजार
 - संरक्षणात्मक प्रशुल्क
 - मुक्त व्यापार का अधिरोपण
 - अपवाह सिद्धांत (Drain Theory)
 - उपनिवेशों का राजनीतिक नियंत्रण
 - पोर्ट्स ऑफ कॉल्स का अधिग्रहण
- औद्योगिक देशों के कारखानों से अतिरिक्त उत्पादन हेतु कच्चे माल और निर्यात बाजारों की खोज के लिए यूरोपीय शक्तियों, जापान और संयुक्त राज्य अमेरिका के बीच उपनिवेशों पर नियंत्रण के लिए एक प्रतिस्पर्धा चल रही थी। इससे नव साम्राज्यवाद का उदय हुआ जिसकी विशेषता उपनिवेशों और प्रभाव क्षेत्रों के लिए होड़ थी।
- 1750 के पश्चात् ग्रेट ब्रिटेन, औद्योगिकीकरण में अग्रणी रहा। अन्य यूरोपीय राष्ट्रों ने 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में ही औद्योगिकीकरण किया और इस प्रकार वे विदेशी बाजारों में अंग्रेजी निर्यात से प्रतिस्पर्धा नहीं कर सके। उन्होंने अपने स्वदेशी उद्योगों की रक्षा हेतु घरेलू और विदेशी बाजारों में अंग्रेजी निर्यात को रोकने के लिए सुरक्षात्मक प्रशुल्क लगाए। इससे पहले कि औद्योगिक क्रांति शेष यूरोप में अपने पाँव पसारती, अंग्रेजों ने वाणिज्यिक पूंजीवाद के अंग के रूप में फ्रांस, स्पेन, पुर्तगाल और हॉलैंड के प्रभाव को रोकने के लिए अमेरिकी उपनिवेशों में व्यापारिक और प्रशुल्क संबंधी प्रतिबन्ध आरोपित कर दिए। इस प्रकार उपनिवेशों के साथ व्यापार पर औपनिवेशिक शक्तियों का एकाधिकार था। परन्तु, उपनिवेशों को अपने स्वदेशी उद्योग की रक्षा के लिए किसी भी प्रकार का संरक्षणात्मक प्रशुल्क लगाने की अनुमति नहीं थी और उन पर मुक्त व्यापार थोप दिया गया, जिसके अंतर्गत औपनिवेशिक राष्ट्र से आयात पर कोई भी शुल्क नहीं लगाया जा सकता था।
- उपनिवेशों के विभिन्न क्षेत्रों जैसे रेलवे में विदेशी निवेश पर उच्च दरों पर लाभ उपलब्ध होता था और औपनिवेशिक राष्ट्र विदेशी निवेश को प्रोत्साहित करता था और स्वदेशी निवेश हतोत्साहित करता था। उपर्युक्त परिघटना को दादाभाई नौरोजी जैसे राष्ट्रवादियों द्वारा प्रतिपादित ड्रेन थियरी में भली-भांति समझाया गया है। अंग्रेजों ने भारत को कच्चे माल का निर्यातक और तैयार माल का आयातक बना दिया था। विदेशी निवेश ने इन निवेशों से प्राप्त होने वाला लाभ विदेशी निवेशकों की जेबों में जाना सुनिश्चित किया।
- उपनिवेशों को राजनीतिक रूप से नियंत्रित किया गया। इसे या तो भारत की तरह प्रत्यक्ष शासन से या फिर भारतीय रियासतों जैसे मध्यस्थों के माध्यम से शासन के द्वारा किया गया। साम्राज्यवाद के दौरान एक और रणनीति थी *पोर्ट्स ऑफ कॉल्स* का अधिग्रहण करना अर्थात् उन स्थानों पर जहाँ पोत कोयला और जल की पुनः पूर्ति कर सकते थे, उन बन्दरगाहों पर कब्जा करना। औपनिवेशिक राष्ट्रों ने उन द्वीपों को जीतने का प्रयत्न किया जो समुद्री मार्गों पर स्थित थे और व्यापारिक देशों के तटों के निकट स्थित थे।

18. नव साम्राज्यवाद का इतिहास

- 'नव-साम्राज्यवाद' के इस रूप की पहचान 19वीं और 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ में साम्राज्यवाद की दूसरी लहर के रूप में की जा सकती है। यह यूरोपीय उपनिवेशवाद की 15वीं से 19वीं शताब्दी की पहली लहर से भिन्न थी। यह औद्योगिक पूंजीवाद का परिणाम थी।
- कुछ उपनिवेशों में स्वाधीनता के लिए संघर्ष प्रारम्भ हो गया था, क्योंकि विश्व एक नए साम्राज्यवाद की ओर बढ़ रहा था। अमेरिका ने 1776 में अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर दी थी। फ्रांसीसी क्रांति ने विश्व के बहुत से देशों में स्वतंत्रता आंदोलनों को प्रेरित किया। प्रारम्भिक वर्षों में नेपोलियन के साथ युद्धों ने स्पेन और पुर्तगाल को निर्बल बना दिया था, जिसके परिणामस्वरूप दक्षिण और मध्य अमेरिका में उनके कुछ उपनिवेशों ने अपनी स्वाधीनता की घोषणा कर दी थी। मैक्सिको 1821 में स्पेन से स्वाधीन हो गया था। साइमन बोलिवर ने कोलम्बिया, इक्वेडोर, पेरू, वेनेजुएला और बोलीविया को स्पेन से मुक्त कराया। 1824 में ब्राजील, पुर्तगाल से मुक्त हो गया गया। इस प्रकार से 1789 की

फ्रांसीसी क्रांति के पश्चात् की अवधि साम्राज्यवाद में गिरावट का एक अस्थायी दौर था, जो 1870 में पुनः उदित हुआ।



- यहाँ उन कारकों का संक्षेप में उल्लेख करना प्रासांगिक है, जिनके कारण नव-साम्राज्यवाद का उदय हुआ:
- **राजनीतिक कारकों की भूमिका:** नव साम्राज्यवाद के उद्भव के पीछे राजनीतिक कारकों की बहुलता थी। इनमें से एक, 1870-71 में जर्मनी व इटली के एकीकरण के पश्चात्, इटली और जर्मनी में निरंकुश राजतंत्र का उदय होना था। इस प्रकार के एकाधिपत्य ने राज्य की ओर से होने वाली आक्रामकता में वृद्धि की। परन्तु, नव-साम्राज्यवाद के लिए पूरी तरह से निरंकुश राजतंत्रों को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है। वास्तव में, ब्रिटेन, जहाँ प्रजातांत्रिक व्यवस्था थी, उसके पास सबसे बड़ा औपनिवेशिक साम्राज्य था। इस प्रकार सभी औद्योगिक शासन, भले ही वे लोकतान्त्रिक या निरंकुश राजतंत्र हो, साम्राज्यवाद में लिप्त थे। औद्योगिकीकरण ने औपनिवेशिक साम्राज्य निर्माण के लिए उनकी क्षुधा के साथ-साथ उनकी सम्भाव्यता में भी वृद्धि की थी। कुछ शासकों ने अपने देश में राजनीतिक नियंत्रण बनाए रखने के लिए साम्राज्यवाद को एक उपकरण के रूप में देखा। उपनिवेशों पर सैन्य विजय और साम्राज्य निर्माण, न केवल औपनिवेशिक शक्तियों की अर्थव्यवस्था में सुधार ला रही थी, अपितु शासकों की प्रतिष्ठा में भी वृद्धि कर रही थी। इन्हीं दो कारकों, अर्थात् एक सशक्त अर्थव्यवस्था और राष्ट्रीय गौरव ने उनके शासन को वैधता प्रदान की। इसी प्रकार के कारकों के कारण इटली और ज़ार द्वारा शासित रूस भी उपनिवेशों की होड़ में सम्मिलित हुए थे।
- **राष्ट्रवाद की भूमिका:** 1789 की फ्रांसीसी क्रांति के पश्चात् राष्ट्रवाद का उत्थान हुआ। औद्योगिकीकरण के युग में यह शीघ्र ही राष्ट्र-राज्यों के बीच आर्थिक प्रतिद्वंद्विता के रूप में प्रकट हुआ। राष्ट्रवादी विचारकों द्वारा प्रतिपादित राष्ट्रीयता के विचारों से इस प्रतिद्वंद्विता को और अधिक बढ़ावा मिला। 1868-72 की अवधि में ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी और इटली में राष्ट्रवाद के परिणामस्वरूप औपनिवेशिक साम्राज्य में विस्तार की मांग उठी। निरंकुश शासक सत्ता पर अपनी पकड़ बनाए रखने और अपनी जनता के ध्यान में भटकाव लाने के लिए साम्राज्यवाद और राष्ट्रवाद दोनों पर निर्भर थे।
- **औद्योगिक क्रांति/औद्योगिक पूंजीवाद की भूमिका:** नव साम्राज्यवाद के उद्भव में औद्योगिक क्रांति प्रमुख कारकों में से एक थी। औद्योगिक क्रांति के पश्चात् व्यापक उत्पादन से अतिरिक्त लाभ मिला जिससे पूंजी संचित हुई। इस धन को पूंजी निर्माण के लिए पुनः निवेश किया गया। परिवहन और संचार अवसंरचना में विकास से लोगों तथा वस्तुओं को तीव्र गति से लाना-ले जाना सम्भव हो गया था और भाप के पोतों के विकास से विश्व भर में व्यापारिक वस्तुओं के आवागमन में लगने वाले समय में कमी आई। 19वीं शताब्दी में यूरोपीय जनसंख्या में तीव्रता से वृद्धि होने के कारण घरेलू बाजारों में भी वस्तुओं की मांग बढ़ रही थी। कारखानों में कच्चे माल की मांग में वृद्धि हुई, जिसके परिणामस्वरूप राष्ट्रीय सीमाओं के बाहर कच्चे माल की खोज होने लगी। यूरोप में जनसंख्या के बढ़ते दबाव के कारण और अधिक उपनिवेशों की खोज आरम्भ हुई जहाँ यूरोपीय लोगों को बसाया जा सकता था। शीघ्र ही, कारखानों में जो उत्पादन हो रहा था वह घरेलू और विदेशी बाजारों की खपत से कहीं अधिक हो गया। इसने नये उपनिवेशों की आवश्यकता में और अधिक वृद्धि की। इस प्रकार से उत्पादित माल की अधिक मांग, लाभ, पूंजी निर्माण, कच्चे माल की मांग, अतिरिक्त उत्पादन और निर्यात बाजारों की मांग का एक चक्र स्थापित हो गया। अतः यह कहा जा सकता है कि औद्योगिक पूंजीवाद (औद्योगिक क्रांति के पश्चात् पूंजीवाद, जब कारखानों में मशीनों से उत्पादन किया जाने लगा) ने साम्राज्य विस्तार पर बल दिया।
- **प्रतिस्पर्धियों की बढ़ी हुई संख्या:** 1870 के दशक के पश्चात् शेष यूरोप, अमेरिका और जापान में भी औद्योगिक क्रांतियाँ हुईं। औद्योगिक देशों ने कच्चे माल के स्रोतों और निर्यात बाजारों की आक्रामक तरीके से खोज प्रारम्भ कर दी थी।
- **भौगोलिक स्थानों में कमी:** 19वीं शताब्दी के मध्य तक, जब उपनिवेश के लिए पर्याप्त स्थान उपलब्ध थे और साम्राज्यों का सुगमता से विस्तार हो सकता था तो विश्व अपेक्षाकृत अधिक शांतिपूर्ण था। परन्तु, 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में किसी भी प्रकार का विस्तार किसी अन्य औपनिवेशिक शक्ति की कीमत पर ही हो सकता था। इस 'दौड़' में प्रतिस्पर्धियों की संख्या में भी वृद्धि हो गई थी। इस प्रकार से

उपनिवेशवाद अब साम्राज्यवाद में परिवर्तित हो चुका था, क्योंकि अब औपनिवेशिक साम्राज्य को बनाये रखने और विस्तार करने के लिए सैन्य शक्ति और कठोर नियंत्रण की आवश्यकता थी। अगले चार दशकों में (1870 से आगे) उपनिवेशों के लिए होड़ प्रारम्भ हो गई थी और अछूते क्षेत्र केवल चीन और अफ्रीका में ही उपलब्ध थे, जिनके लिए यूरोपीय राष्ट्रों में होड़ लगी हुई थी।



- **धार्मिक और सांस्कृतिक कारक:** ईसाई धर्म का प्रसार करने के लिए ईसाई प्रचारकों (मिशनरीज) की आकांक्षाएँ और पिछड़े उपनिवेशों में श्रेष्ठ सभ्यता का प्रसार करने का भार श्वेत लोगों द्वारा अपने कंधे पर लिए जाने की धारणा ने भी इसमें अपनी भूमिका का निर्वाह किया। बेल्जियम के सम्राट लियोपोल्ड द्वितीय ने कांगो का शोषण करने के लिए इस धारणा को एक साम्राज्यिक रणनीति के रूप में उपयोग किया और ऐसा ही कुछ अन्य साम्राज्यवादी शक्तियों ने किया। परन्तु कुछ नेक व्यक्तियों ने सामाजिक सुधारों के माध्यम से लोगों के जीवन में उत्थान के लिए भी कार्य किया। थियोसोफिकल सोसायटी ने भी भारत में 1916 में साम्राज्यवाद विरोधी 'होम रूल आन्दोलन' का नेतृत्व किया। अन्य विषय जिन पर उन्होंने कार्य किया, उनमें महिलाओं के अधिकार और आधुनिक शिक्षा का प्रसार सम्मिलित थे।

नव साम्राज्यवादी शक्तियों का उदय		औद्योगिकरण की वास्तविक शुरुआत	नव साम्राज्यवाद के पीड़ित
इटली	1870 से आगे	1870 से आगे	प्रमुख रूप से अफ्रीका
जर्मनी	1870 से आगे	1870 से आगे	प्रमुख रूप से अफ्रीका, प्रशांत महासागर क्षेत्र
रूस	1850 के दशक से आगे	1914 तक प्रारम्भ हुआ फिर भी प्रथम विश्वयुद्ध के आरम्भ तक प्रमुखता कृषि अर्थव्यवस्था थी	प्रमुख रूप से मध्य एशिया, पश्चिमी एशिया एवं चीन
संयुक्त राज्य अमेरिका	1890 के दशक तक	1865 से आगे	प्रमुख रूप से प्रशांत महासागर क्षेत्र (दक्षिणी अमेरिका का प्रभुत्व)
जापान	1890 के दशक तक	1868 से आगे	प्रमुख रूप से चीन (सुदूर पूर्व) और प्रशांत महासागर क्षेत्र

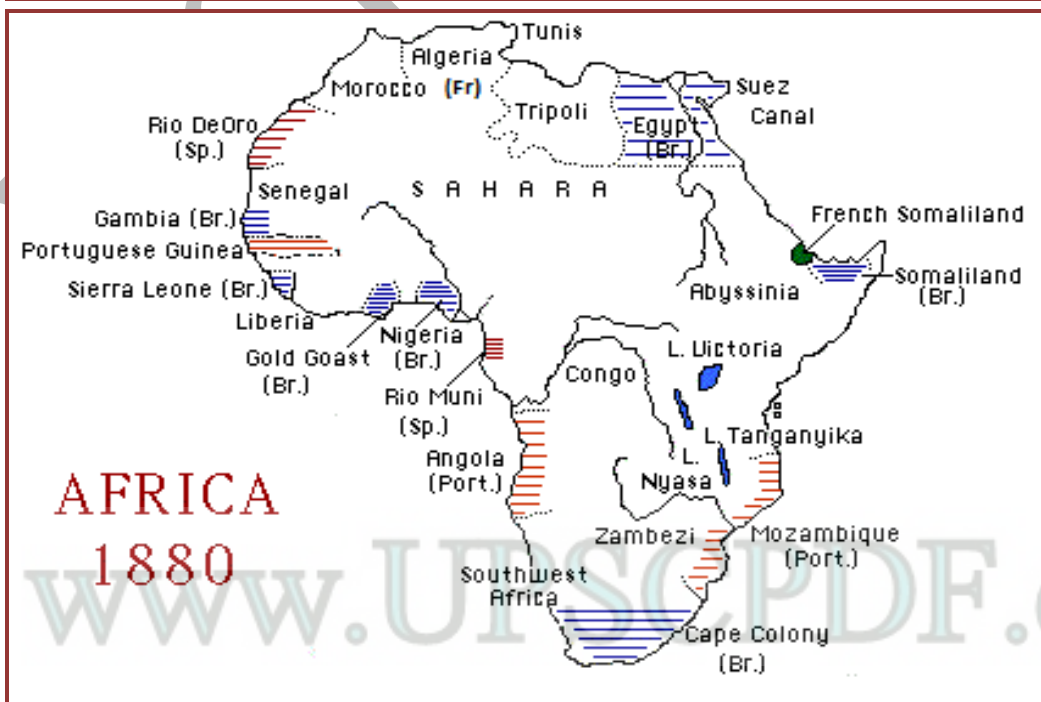
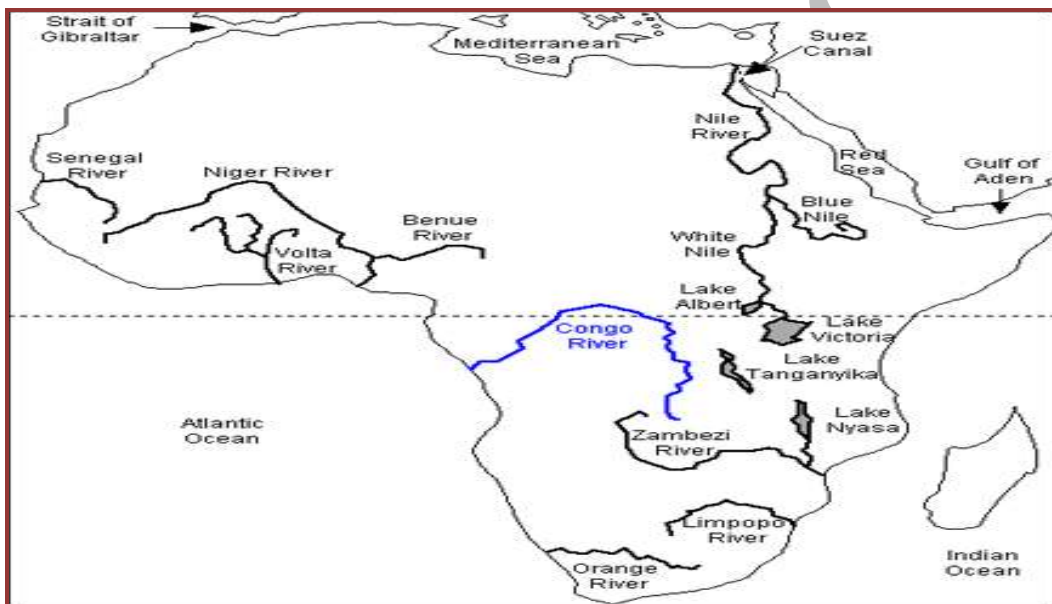
19. अफ्रीका में उपनिवेशवाद

- 19वीं शताब्दी में इसके आन्तरिक क्षेत्रों की खोज नहीं होने से पहले तक अफ्रीकी महाद्वीप को अंध महाद्वीप के रूप में जाना जाता था। दुर्गम क्षेत्र, गैर-परिवहनीय नदियाँ और ऐसी ही अन्य भौगोलिक विशेषताओं के चलते ही अफ्रीका की मुख्य भूमि में उपनिवेशवाद का प्रवेश देर से हुआ और लम्बे समय तक यह तटीय अफ्रीका तक ही सीमित रहा।
- दास प्रथा पर पिछले अध्याय में पहले ही चर्चा की जा चुकी है।
- 19वीं शताब्दी में, व्यक्तिगत अन्वेषकों द्वारा किये गए अभियानों के प्रकाशन ने यूरोपीय लोगों में इसके प्रति रूचि बढ़ा दी। इन प्रकाशनों में उन अन्वेषकों के वृत्तांत भी सम्मिलित थे, जिन्होंने मध्य अफ्रीका की सम्पत्ति के विस्तृत विवरण प्रस्तुत किये थे। वे कांगो जैसी नदियों के जलमार्ग की रूपरेखा प्रस्तुत करने में सफल रहे। नदियों के नौवहन में योगदान और उनके जलमार्ग का ज्ञान होने का अर्थ था कि यूरोपीय कम्पनियाँ और उनके सैन्यबल अब आन्तरिक क्षेत्रों में पहुँच सकते थे और खनिज सम्पत्ति को आगे निर्यात करने के लिए तट पर वाहनों द्वारा ला सकते थे।
- बेल्जियम के सम्राट लियोपोल्ड द्वितीय ने अन्वेषकों को संरक्षण दिया और यह मध्य अफ्रीका में उपनिवेश स्थापित करने वाला पहला देश था। 1876 में उसने कांगो को अपने नियंत्रण में ले लिया और इसका प्रबन्धन निजी उपनिवेश के रूप में किया {1885 में कांगो का कांगो मुक्त राज्य (Congo Free State) के रूप में नामकरण कर दिया गया}। बेल्जियम की सफलता ने अन्य यूरोपीय शक्तियों की इसमें रूचि बढ़ा दी और उन्होंने भी अफ्रीका में उपनिवेशों की खोज के लिए प्रवेश किया। कांगो के

उपनिवेशीकरण के पश्चात् अफ्रीका के लिए होड प्रारम्भ हो गई। 1914 तक अबीसीनिया (जहाँ 1876 में अडोवा के युद्ध में राष्ट्रवादियों द्वारा इटली की हार हुई थी) और लाईबेरिया को छोड़ कर सम्पूर्ण अफ्रीका - ब्रिटेन, बेल्जियम, फ्रांस, जर्मनी, इटली और पुर्तगाल में बंट चुका था।



- अफ्रीका में भू-क्षेत्र और व्यापारिक अधिकारों को लेकर यूरोपीय शक्तियों के बीच बहुत से विवाद थे। मिस्र और सूडान में अंग्रेजों और फ्रांसीसियों के हितों में टकराव था। बेल्जियम ने 1884 में ब्रिटेन और पुर्तगाल के बीच हुए समझौते का विरोध किया। इसके तहत इन दोनों के प्रभाव क्षेत्रों की सीमा निर्धारित की गई थी। चूंकि इसके द्वारा बेल्जियम को कांगो तक समुद्री पहुंच से वंचित कर दिया गया था, अतः उसने इसका विरोध किया था। अंततः यूरोपीय औपनिवेशिक शक्तियों के अतिव्यापी दावों को विभिन्न सम्मेलनों में वार्ताओं के माध्यम से सुलझाया गया।
- जर्मनी में 1884-85 के **बर्लिन सम्मेलन** का आयोजन पश्चिमी और मध्य अफ्रीका, विशेषकर नाइजर और कांगो नदियों के विवादों के समाधान के लिए किया गया था। यह एक महत्वपूर्ण घटना थी जिसके परिणामस्वरूप अफ्रीका में प्रत्येक औपनिवेशिक शक्ति के प्रभाव क्षेत्र को निर्धारित किया गया।



चित्र: 1880 में अफ्रीका

बर्लिन सम्मेलन (1884-85) के कुछ निर्णय इस प्रकार थे:

- नाइजर नदी घाटी को अंग्रेजों और फ्रांसीसियों के बीच विभाजित किया गया था, निचला नाइजर ब्रिटेन का संरक्षित राज्य बन गया और ऊपरी नाइजर फ्रांस का संरक्षित राज्य बन गया।
- नाइजर नदी को सभी हस्ताक्षरकर्ताओं के पोतों के लिए निःशुल्क बनाया गया।
- अंग्रेज, ट्युनिस को फ्रांस का उपनिवेश बनाने पर सहमत हो गये। स्पेन को आज के पश्चिमी सहारा का तटीय क्षेत्र सौंप दिया गया।
- इसके अतिरिक्त, यूरोपीय शक्तियों ने अफ्रीकी लोगों के कल्याण और विकास के लिए कदम उठाने का वचन भी दिया। इस सम्मेलन में अश्वेत और इस्लामिक शक्तियों द्वारा प्रयुक्त दास प्रथा को समाप्त करने हेतु संकल्प लिया गया। साथ ही प्रत्येक औपनिवेशिक शक्ति द्वारा अपने प्रभाव क्षेत्र में इसको समाप्त किया जाना था।
- यह निर्णय लिया गया कि कांगो मुक्त राज्य का शासन *इंटरनेशनल एसोसिएशन फॉर एक्सप्लोरेशन एंड सिविलाइजेशन ऑफ सेंट्रल अफ्रीका* (International Association for Exploration and Civilization of Central Africa) द्वारा किया जायेगा। इस संघ की स्थापना बेल्जियम के सम्राट लियोपोल्ड द्वितीय द्वारा की गयी थी और इस प्रकार कांगो को सम्राट लियोपोल्ड द्वितीय के निजी उपनिवेश के रूप में मान्यता प्राप्त हो गयी (बेल्जियम सरकार द्वारा इसे 1908 में लियोपोल्ड द्वितीय से वापिस लिया जाना था)।
- कांगो नदी घाटी में सबके लिए व्यापार और जहाजरानी की स्वतंत्रता की गारंटी थी। किसी भी राष्ट्र को कांगो में किसी विशेषाधिकार का दावा नहीं मिला था और सम्राट लियोपोल्ड ने सभी हस्ताक्षरकर्ता राष्ट्रों को निवेश की स्वतंत्रता प्रदान कर दी थी। समझौते के अनुपालन की निगरानी के लिए एक अंतर्राष्ट्रीय आयोग भी स्थापित किया गया था।

19.1. अफ्रीका के लिए फ्रांसीसी संघर्ष

- फ्रांस ने उत्तर-पश्चिमी अफ्रीका में अपना साम्राज्य स्थापित किया। अल्जीयर्स (1830), गाम्बिया के कुछ हिस्से, और ट्युनिस (1881) को अपना उपनिवेश बनाने के पश्चात् अब यह मोरक्को पर अपना नियंत्रण स्थापित करना चाह रहा था। प्रारम्भ में फ्रांस को विरोध का सामना करना पड़ा। 1880 के **मैड्रिड सम्मेलन** में मोरक्को की स्वतंत्रता की गारंटी दी गयी और सभी यूरोपीय देशों को व्यापार की स्वतंत्रता का अधिकार दिया गया। परन्तु 1900 में फ्रांस ने इटली के साथ एक समझौते पर हस्ताक्षर किये, जिसके अंतर्गत इटली ने मोरक्को में फ्रांस के प्रभाव का विरोध न करने पर अपनी सहमति दे दी और फ्रांस ने इसके बदले में लीबिया पर इटली के नियंत्रण का विरोध न करने के लिए वचन दिया।
- बर्लिन सम्मेलन में ब्रिटेन ने ट्युनिस पर फ्रांस के विशेषाधिकार के लिए सहमति दे दी। इसके अतिरिक्त 1904 में ब्रिटेन और फ्रांस ने एक समझौते पर हस्ताक्षर किये, जिसके अंतर्गत फ्रांस ने मिस्र और सूडान पर अंग्रेजों के विशेषाधिकार को मान्यता दी, वहीं फ्रांस को मोरक्को पर अपने विशेषाधिकार को मान्यता मिल गयी। इसी वर्ष, एक समझौते के अंतर्गत मोरक्को में स्पेन और फ्रांस की सीमाएं निर्धारित की गईं। उपनिवेशवाद की होड़ में जर्मनी का प्रवेश सबसे बाद में हुआ और वह अपने आप को इस होड़ में पिछड़ा हुआ अनुभव कर रहा था। 1911 में जब फ्रांस ने मोरक्को में अपनी सेना तैनात की तो जर्मनी ने अपने युद्धपोत को निकटवर्ती द्वीप अगादिर में भेज दिया। वार्ता के पश्चात् जर्मनी को फ्रांसीसी कांगो का कुछ क्षेत्र दे दिया गया और उसके बदले में उसने मोरक्को पर फ्रांस के नियंत्रण को मान्यता दे दी। 1912 में फ्रांस ने मोरक्को को अपना संरक्षित राज्य बना लिया और मोरक्को अब स्वतंत्र नहीं था।





19.2. अफ्रीका के लिए ब्रिटिश संघर्ष

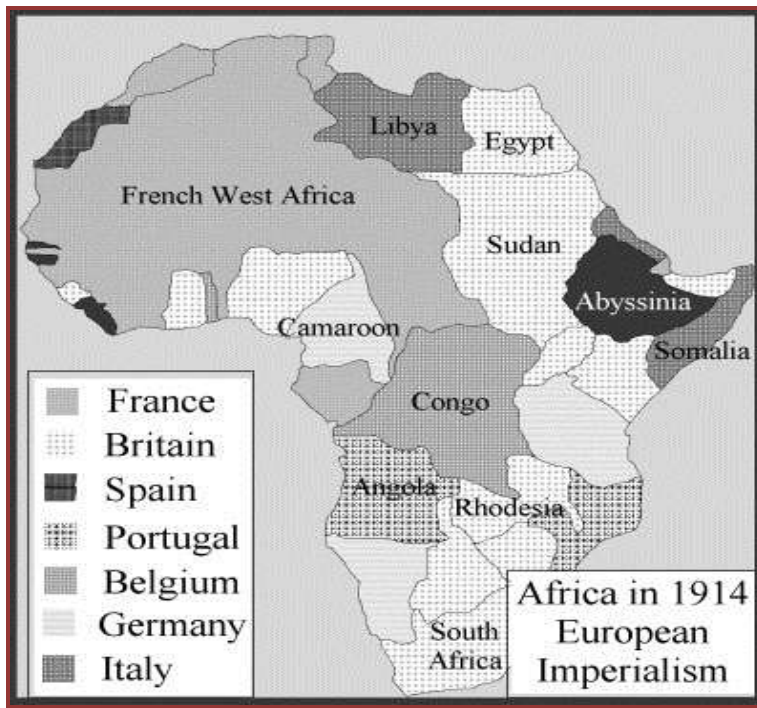
- दक्षिणी, पूर्वी एवं पश्चिमी अफ्रीका में अंग्रेजों के उपनिवेश थे। पश्चिम में गोल्ड कोस्ट (घाना) का इसका उपनिवेश कोको के उत्पादन में बहुत समृद्ध था, वहीं नाईजीरिया में तेल के बहुत बड़े भंडार थे। स्वेज नहर के कारण मिस्त्र में अंग्रेजों की विशेष रुचि थी, जहाँ से उसे अपने एशियाई उपनिवेशों के लिए, विशेषकर भारत के लिए छोटा समुद्री मार्ग मिलता था। स्वेज नहर का प्रबन्धन एक कम्पनी कर रही थी, जिसमें फ्रांस और मिस्त्र के गवर्नर की सहभागिता थी। 19वीं शताब्दी में मिस्त्र आर्थिक संकट से गुजर रहा था और उसे स्वेज नहर में अपनी शेयरधारिता 1875 में अंग्रेजों को बेचनी पड़ी। 1876 में मिस्त्र; ब्रिटेन और फ्रांस से लिए गये अपने ऋण की किश्त वापस करने में असफल रहा परिणामस्वरूप दोनों यूरोपीय शक्तियों ने मिस्त्र की सरकार के बजट प्रबन्धन के लिए एक परिषद की स्थापना की और इस प्रकार मिस्त्र उनके आर्थिक नियंत्रण में आ गया। कराधान की उच्च दरों और वेतन भुगतान में देरी के कारण मिस्त्र की सेना ने 1882 में विद्रोह कर दिया। ब्रिटिश सेना ने इस विद्रोह को कुचल दिया और मिस्त्र अंग्रेजों के नियंत्रण में आ गया। 1904 में फ्रांस ने मोरक्को पर अपने अधिकार की मान्यता के बदले में मिस्त्र और सूडान पर अंग्रेजों के नियंत्रण को मान्यता दे दी। 1922 में, मिस्त्र को स्वतंत्रता दे दी गयी परन्तु ब्रिटेन ने स्वेज नहर पर अपना नियंत्रण बनाए रखा।

19.3. अफ्रीका के लिए जर्मनी का संघर्ष

- अफ्रीका के लिए संघर्ष में जर्मनी ने 1870 में अपने एकीकरण के पश्चात् प्रवेश किया। 1882 से 1884 तक जर्मनी दक्षिणी पश्चिमी अफ्रीका, कैमरून और भूमध्यरेखीय अफ्रीका में टोगोलैंड और जर्मन पूर्वी अफ्रीका में उपनिवेश स्थापित करने में सफल रहा।
- प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् जर्मन औपनिवेशिक साम्राज्य का अंत हो गया और इसके उपनिवेशों को मित्र राष्ट्रों के बीच मँडेट्स के रूप में बाँट दिया गया। मँडेट्स वे पूर्व उपनिवेश थे, जिन्हें लीग ऑफ नेशंस द्वारा बाद में स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु तैयार करने के लिए विकसित देशों को सौंप दिया गया था। उदाहरण के लिए जर्मनी के कब्जे वाले दक्षिणी-पश्चिमी अफ्रीका को मँडेट के रूप में दक्षिणी अफ्रीका को सौंप दिया गया था।

19.4. अफ्रीका के लिए इटली का संघर्ष

- जर्मनी की भांति, इटली भी देर से प्रवेश करने वालों में से था। यह ट्युनिस को उपनिवेश बनाने में असफल रहा, क्योंकि फ्रांस ने 1881 में इसे अपने अधिकार में ले लिया था। यह उत्तरी-पूर्वी अफ्रीका में ईरीट्रिया को उपनिवेश बनाने में सफल रहा। विभिन्न संधियों के माध्यम से 1880 के दशक में इसने पूर्वी सोमालीलैंड का अधिग्रहण किया। अबीसीनिया (इथियोपिया), ईरीट्रिया और पूर्वी सोमालिया के बीच में पड़ता है। इटली इसे उपनिवेश बनाने में विफल रहा और 1896 में यहाँ के राष्ट्रवादियों ने इटली को हरा दिया। 1911 में, इटली ने निर्बल ऑटोमन तुर्की साम्राज्य से लीबिया को अपने कब्जे में ले लिया। 1935 में इटली ने इथियोपिया पर हमला करके उसे अपने नियंत्रण में ले लिया। द्वितीय विश्व युद्ध में पराजय के पश्चात् इटली ने अपने सभी उपनिवेशों से हाथ धो लिए।
- बेल्जियम जैसा छोटा-सा राष्ट्र भी अफ्रीकी केक में अपना भाग प्राप्त करने में सफल रहा। पहले इसने कांगो को अपना उपनिवेश बनाया और फिर रवांडा और बुरुंडी में अपने नियंत्रण का विस्तार कर लिया।
- अंगोला, गिनी और मोजाम्बीक पुर्तगाल के उपनिवेश थे; वहीं स्पेन के पास मोरक्को, स्पेनिश सहारा (रिओ डी ओरो इसका भाग था) और स्पेनिश गिनी थे।



चित्र: यूरोपीय साम्राज्यवाद और अफ्रीका (1914)



19.5. अफ्रीका पर उपनिवेशवाद के प्रभाव

- औपनिवेशिक श्वेत लोग कुलीन बन गए और उन्होंने देशी अश्वेतों का शोषण किया।
- दासप्रथा।
- औपनिवेशिक शक्तियों द्वारा जनसंहार।
- फूट डालो और राज करो की नीति ने स्वतंत्रता के पश्चात् समस्याएं उत्पन्न कीं।
- शिक्षा और स्वास्थ्य की अत्यधिक उपेक्षा।
- आर्थिक विकास की क्षति।

19.5.1. औपनिवेशिक श्वेत लोग कुलीन बन गए और उन्होंने देशी अश्वेतों का शोषण किया

- अफ्रीका में उपनिवेशवाद अपने साथ व्यवसायी, व्यापारी, प्रचारक, सैन्य और प्रशासनिक अधिकारी साथ ले कर आया। उनमें से अनेक अफ्रीका की समृद्ध कृषि-योग्य भूमि और व्यापार के लाभ के आकर्षण के कारण वहीं बस गए। प्रचारकों ने अपने धर्म के प्रचार के लिए यहाँ का रुख किया और चर्चों की स्थापना की। इसलिए आज हम कई अफ्रीकी देशों को मुस्लिम और ईसाई वर्चस्व वाले क्षेत्रों में विभाजित देखते हैं। यूरोप वासी अफ्रीका में कुलीन बन गए थे और विलासितापूर्ण जीवन का आनन्द उठाते थे जिसे वे स्वदेश में प्राप्त करने में असमर्थ थे। दक्षिणी अफ्रीका में बोअर्स जैसे औपनिवेशिक श्वेत लोग अफ्रीका में समृद्ध और शक्तिशाली बन गए। उनका सरकार पर नियंत्रण था और उन्होंने अफ्रीकियों को उनके किसी भी राजनीतिक अधिकार से वंचित कर दिया था। लगभग प्रत्येक उपनिवेश में अफ्रीकियों की भूमि को औपनिवेशिक श्वेत लोगों ने कृषि और खनन के लिए उनसे ले लिया था और अश्वेत लोग उनके दासों के रूप में कार्य करते थे।

19.5.2. दासप्रथा

- दास व्यापार ने कई अफ्रीकियों को बलपूर्वक अपने घरों को छोड़ने के लिए विवश कर दिया और वे फिर कभी अपने घर वापस नहीं लौट सके। इसने कई परिवारों को नष्ट कर दिया। स्थानीय अफ्रीकियों का स्थानीय दास बाजारों में व्यापार होता था। अफ्रीका में यूरोपीय खेतों में वे श्रमिकों की भांति कार्य करते थे। दासप्रथा का मनोवैज्ञानिक कुप्रभाव हीन भावना थी, जिसे सुव्यवस्थित रूप से समाज में पहुंचाया जा रहा था और स्वामी और दास के वर्णभेद की अवधारणा को चर्च तक का समर्थन प्राप्त था। दक्षिण अफ्रीका और जिम्बाब्वे में अफ्रीकियों को उनके अधिकारों से वंचित करने के लिए वर्णभेद के सिद्धांत की रंगभेद नीति को संस्थागत रूप से प्रचारित किया गया।



19.5.3. औपनिवेशिक शक्तियों द्वारा जनसंहार

- अफ्रीकियों ने बहुत वीरता के साथ औपनिवेशिक सेनाओं का विरोध किया, परन्तु वे यूरोपीय लोगों की बंदूक की तकनीक के विरुद्ध खड़े नहीं हो सके। यूरोपीय सेनाओं द्वारा कई अफ्रीकियों को अपनी भूमियों को छीने जाने, दासता, और यूरोपियों द्वारा प्रस्तावित प्रतिकूल संधियों और यूरोपीय संस्कृति को लागू करने का विरोध करने के कारण हत्याएँ की गईं। जब कभी भी स्थानीय निवासियों ने उपनिवेशियों की मांगों को मानने से मना किया तो पूरे गाँव को नष्ट कर दिया जाता था। बेल्जियम कांगो ने शायद आधुनिक युग का पहला जनसंहार देखा था। 1876 से 1910 तक बेल्जियम के सम्राट लियोपोल्ड द्वितीय के प्रशासनिक अधिकारियों ने लगभग 10 मिलियन अफ्रीकियों को बेल्जियम कांगो में मौत के घाट उतार दिया था।

19.5.4. बांटो और राज करो की नीति से स्वतंत्रता पश्चात् समस्याएं

- विभिन्न भौगोलिक कारकों के कारण अफ्रीका में विभिन्न आदिवासी संस्कृतियाँ देखने को मिलती हैं। अफ्रीका की खींचतान ने अफ्रीका को मनमानी सीमाओं के साथ कई उपनिवेशों में विभाजित कर दिया था, जिनमें भौगोलिक निरन्तरता, सांस्कृतिक एकता या आर्थिक व्यवहार्यता का अभाव था। इन उपनिवेशों में विभिन्न जनजातियाँ निवास करती थीं जिनकी बिलकुल ही भिन्न-भिन्न संस्कृतियाँ थीं। वे स्वयं को एक राष्ट्र के भाग के रूप में नहीं देखते थे। इसके अतिरिक्त, उपनिवेशवादियों ने *बांटो और राज करो* की शासकीय नीति का उपयोग किया। उन्होंने एक जनजाति को किसी अन्य जनजाति के मूल्य पर संरक्षित किया। अभीष्ट जनजातीय लोगों को शस्त्र और धन उपलब्ध कराया गया जिसका उपयोग अन्य जनजातियों को बलपूर्वक अधीनता में लाने के लिए किया जाता था। इसके कारण जनजातीय समूहों में परस्पर शत्रुता उत्पन्न हुई। उदाहरण के लिए, रवांडा में बेल्जियम ने इस नीति का पालन किया और स्वाधीनता के पश्चात् देश में निरंतर जनजातीय हिंसा की घटनाएँ देखने में आईं। हाल ही के इतिहास में यह देखा गया कि 1994 में, इस प्रक्रिया ने सबसे विकृत नृजातीय संघर्ष का रूप लिया, जिसमें हूत जनजाति के लोगों ने तुत्सी कबीले के लाखों लोगों की हत्या कर दी। अफ्रीकी राष्ट्रों में आज भी राष्ट्रीय एकता की कमी भयाक्रांत करती है, जिसके कारण एक कार्यात्मक लोकतंत्र को सुनिश्चित करना कठिन हो गया है।

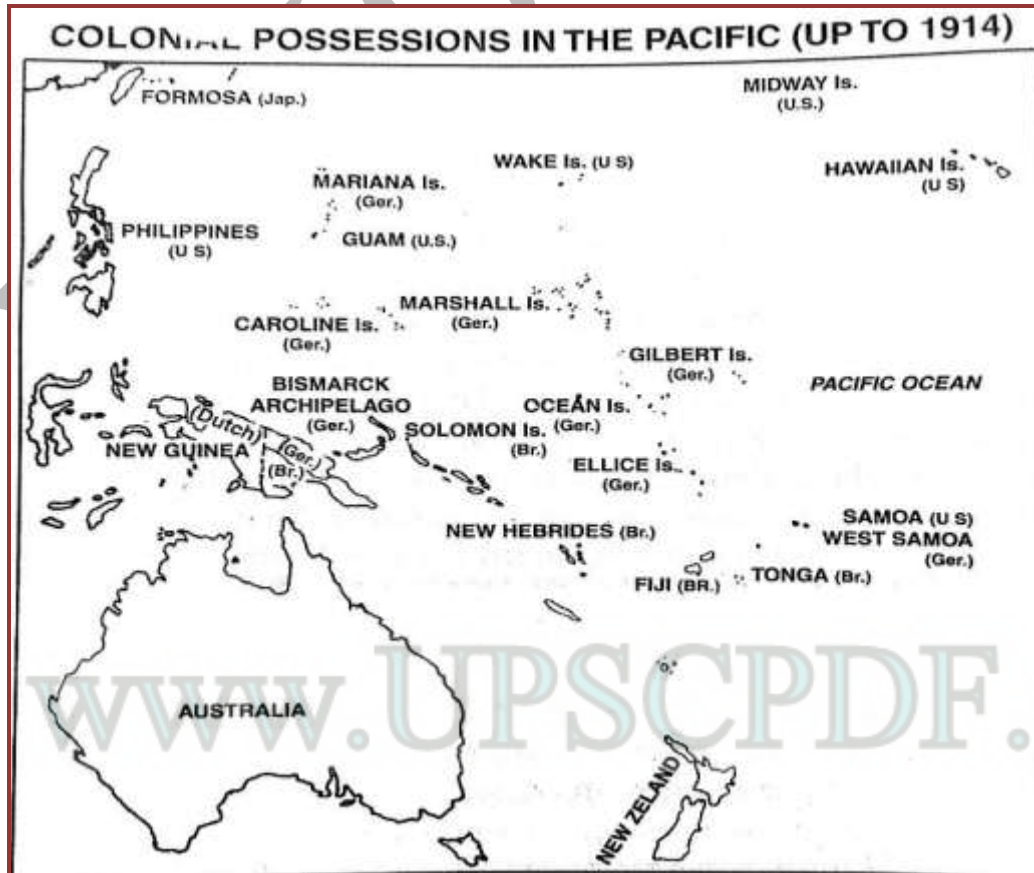
19.5.5. शिक्षा और स्वास्थ्य की अत्यधिक उपेक्षा

- उपनिवेशवादियों और श्वेत उपनिवेशियों ने यह सुनिश्चित किया कि देशी अश्वेत शिक्षित न हो सकें। उच्च शिक्षा की विशेष रूप से उपेक्षा की गयी। जहाँ भी रंगभेद की नीति का अनुसरण किया गया, अफ्रीकियों को भिन्न विद्यालयों में निम्न स्तर की शिक्षा प्रदान की गई। अफ्रीकी देशों की स्वाधीनता के पश्चात् यदि सांख्यिकीय रूप में कहा जाए तो प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च स्तर पर प्रवेश का अनुपात बहुत ही कम था। उदाहरण के लिए 1960 में बेल्जियम कांगो की स्वाधीनता के समय केवल 17 सत्रातक थे और कोई भी चिकित्सक, वकील, इंजीनियर नहीं था। इसके अतिरिक्त सेना में अधिकारी पद पर कोई भी अफ्रीकी नहीं था। इसके परिणामस्वरूप, स्वाधीनता के पश्चात् प्रशासनिक अक्षमता देखने को मिली जिसकी परिणति लोकतान्त्रिक सरकारों के निरंतर पतन में हुई। निर्वाचित सरकारें विकास के बड़े लक्ष्यों को पूरा करने में विफल रहीं और वे सहायता के लिए विकसित विश्व पर निर्भर हो गए, जिसके कारण अफ्रीकी देशों में एक नव-उपनिवेशवाद आया। आज अफ्रीका की जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है और इसकी अधिकांश जनसंख्या कार्यशील आयुवर्ग में है। शिक्षा की कमी के चलते इस कार्यशील आयुवर्ग के ढांचे को जनसांख्यिकीय लाभांश में परिवर्तित करने का प्रयास किया जा रहा है, यदि यह कार्य आरंभ में हुआ होता तो वर्तमान में एक कुशल कार्यबल सुनिश्चित किया जा सकता था।
- स्वास्थ्य क्षेत्र को भी बहुत अधिक उपेक्षित किया गया। ये उपनिवेश भूमध्यरेखीय आर्द्र जलवायु के कारण नियमित रूप से कई महामारियों से ग्रस्त रहते हैं। HIV- AIDS अफ्रीका में सर्वाधिक प्रचलित बीमारी है और आज WHO तथा बिल एवं मिलिंडा गेट्स फाउंडेशन जैसे गैर-सरकारी संगठनों के लिए यह सबसे बड़ा कार्यक्षेत्र है।

19.5.6. आर्थिक विकास की क्षति

- उपनिवेशवाद, उपनिवेशवासियों के मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक पक्षों को प्रभावित करता है। जनजातीय विवादों के कारण समाज में एकजुटता का अभाव, दासता के कारण जातिगत पूर्वाग्रहों की उपस्थिति, निरंतर हीन भावना, शिक्षा का अभाव तथा शासन में भागीदारी का नकारा जाना – उपनिवेशवाद के नकारात्मक पक्ष हैं। ये कारक आर्थिक विकास में बाधक बने और स्वदेशी उद्यमशीलता को अफ्रीका में विकसित नहीं होने दिए। औपनिवेशिक शक्तियों द्वारा वाणिज्यिक पूंजीवाद का अनुसरण किए जाने से अफ्रीकी अर्थव्यवस्थाओं को क्षति पहुंची। अफ्रीकियों को निर्यात किए गए अपने खनिज संसाधनों का बाजार मूल्य नहीं मिला। उपनिवेशवादियों ने यह सुनिश्चित किया कि अफ्रीका में कोई भी स्वदेशी उद्योग न विकसित हो और अफ्रीका केवल कच्चे माल का निर्यातक और यूरोपीय कारखानों में उत्पादित तैयार माल का आयातक बना रहे।
- 1880 के दशक में बर्लिन सम्मेलन में अफ्रीकी क्षेत्रों के संदर्भ में जर्मनी विभिन्न यूरोपीय देशों के स्पष्ट नियंत्रण से सम्बन्धित एक खंड (clause) शामिल करना चाहता था, ताकि उक्त क्षेत्र पर किसी औपनिवेशिक राष्ट्र का स्पष्ट दावा हो सके। इस खंड के जोड़े जाने से मुख्य लाभ यह होना था कि कोई औपनिवेशिक राष्ट्र अपने उपनिवेश में आधारभूत ढांचा विकसित कर सकता था, साथ ही कानून एवं व्यवस्था हेतु एक मशीनरी भी विकसित की जा सकती थी। जर्मनी इस खंड का उपयोग कर अन्य यूरोपीय राष्ट्रों को उपनिवेश स्थापित करने से रोकना चाहता था। परन्तु ब्रिटेन और फ्रांस ने इस खंड को नहीं जुड़ने दिया। इस प्रकार कई अफ्रीकी राष्ट्रों में औपनिवेशिक शक्तियों ने शासन किया और आर्थिक लाभ अर्जित किए। जो भी थोड़ी बहुत मूलभूत अवसरचना विकसित की गयी थी उसे औपनिवेशिक हितों को सुगम बनाने के लिए किया गया था। उदाहरण के लिए परिवहन ढांचे का उद्देश्य आन्तरिक खनिज समृद्ध क्षेत्रों से कच्चे माल को बंदरगाहों तक पहुँचाना था। ब्रिटेन हाईड्रोकार्बन की निकासी के लिए सूडान और नाईजीरिया में पाईपलाइन विकसित करने की जल्दी में था। इसके अतिरिक्त औपनिवेशिक प्रतिद्वंद्विता के परिणामस्वरूप उपनिवेशवादियों ने उपनिवेशों के बीच व्यापारिक अवरोध उत्पन्न किये और इस प्रकार अफ्रीका में कोई एकीकृत बाजार विकसित नहीं हो सका।

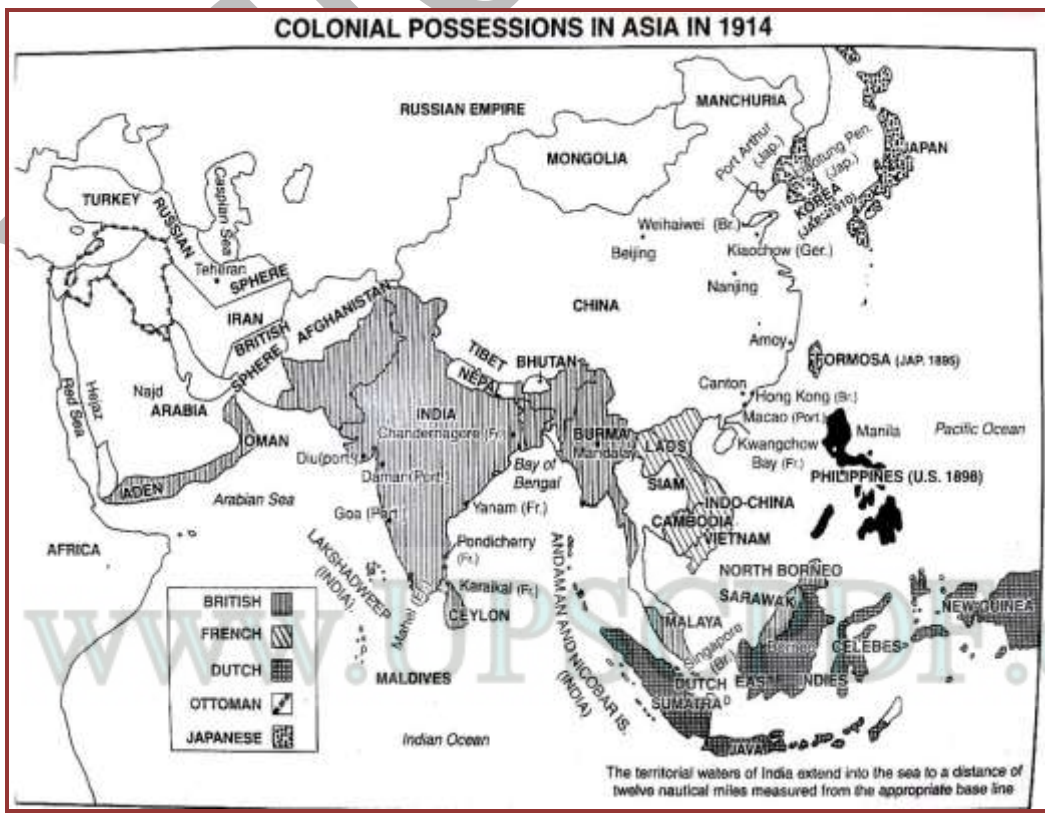
20. प्रशांत महासागर क्षेत्र में उपनिवेशवाद





- वर्ष 1900 तक प्रशांत महासागर के लगभग सभी द्वीप औपनिवेशिक नियंत्रण में आ गए थे।
- **संयुक्त राज्य अमेरिका:** 1823 में संयुक्त राज्य अमेरिका ने मुनरो सिद्धांत प्रस्तुत किया। इसमें दो बातों पर विशेष बल दिया गया था: सम्पूर्ण अमेरिका (उत्तर और दक्षिण) में अलगाव और यू.एस. अधिपत्य की नीति। इसमें कहा गया था कि संयुक्त राज्य अमेरिका यूरोपीय मामलों या उनके उपनिवेशों में हस्तक्षेप नहीं करेगा और अपने बैकयार्ड (उत्तर और दक्षिण अमेरिका) में किसी भी प्रकार के हस्तक्षेप को आक्रामक कार्यवाही मानेगा। परन्तु 1890 तक, अमेरिका एक नई साम्राज्यवादी शक्ति के रूप में उभरा। इसने अमेरिका के बाहरी क्षेत्रों को भी अपने प्रभाव में लाना प्रारम्भ कर दिया अर्थात इसने अपनी 'बैकयार्ड' अवधारणा का विस्तार प्रशांत महासागर और सुदूर पूर्व (चीन) तक कर दिया।
- 1881 तक यू.एस.ए. ने हवाई द्वीप समूह पर यह कहते हुए दावा करना प्रारंभ कर दिया कि ये द्वीप अमेरिका के अंग हैं। स्पेन-अमेरिकी युद्ध (जिसे स्पेन के उपनिवेश क्यूबा पर अधिपत्य के लिए लड़ा गया था) के परिणामस्वरूप:
 - प्रशांत महासागर में स्पेन के उपनिवेश:
 - फिलीपींस पर यू.एस.ए. ने आक्रमण किया और इसका अधिग्रहण कर लिया।
 - प्यूर्टो रिको और गुआम को अमेरिका को सौंप दिया गया।
 - यद्यपि क्यूबा को स्वतंत्र कर दिया गया परन्तु इसकी विदेश नीति यू.एस.ए. के नियंत्रण में आ गई और इसपर किसी अन्य देश के साथ संधि करने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया।
- हवाई द्वीप समूह (प्रशांत क्षेत्र) पर 1898 में आधिकारिक रूप से यू.एस. का नियंत्रण हो गया। (*गुआम और हवाई द्वीप आज भी अमेरिका की एशिया नीति के लिए रणनीतिक रूप से महत्वपूर्ण हैं)।
- अमेरिका, जर्मनी और ब्रिटेन के मध्य सामोआ द्वीप पर नियंत्रण को लेकर विवाद था। 1899 में सामोआ द्वीपों को यू.एस. और जर्मनी के मध्य विभाजित कर दिया गया। (ब्रिटेन को इसकी क्षतिपूर्ति कहीं और की गई)।
- ब्रिटेन के मामले में न्यूजीलैंड और ऑस्ट्रेलिया के अधिवासी चाहते थे कि उनके आसपास के क्षेत्रों को ब्रिटेन अपना उपनिवेश बनाए। निरंकुश शासन का विरोध करने वाले फिजी के मूल निवासियों की मांग पर ब्रिटेन ने 1885 में फिजी पर अधिकार कर लिया। 1885 में ब्रिटेन और जर्मनी ने न्यू गिनी के पूर्वी भाग को अपने मध्य विभाजित कर लिया, जबकि पश्चिम भाग पर हॉलैंड का नियंत्रण था। प्रशांत महासागर के कुछ द्वीपों को जर्मनी ने स्पेन से खरीद लिया।

21. मध्य और पश्चिमी एशिया में उपनिवेशवाद





- मध्य और पश्चिमी एशिया में उपनिवेशों को लेकर प्रतिद्वंद्विता मुख्य रूप से रूस और ब्रिटेन के मध्य थी। व्यापार की सुगमता के लिए रूस समुद्र तक आसान पहुंच चाहता था, इसलिए वह इन क्षेत्रों के बन्दरगाहों को नियंत्रित करना चाहता था। वह विस्तारवादी नीति का पालन कर रहा था, जो ब्रिटेन के भारतीय साम्राज्य के लिए खतरा थी। 1907 तक दोनों प्रतिद्वन्द्वियों के संबंध तनावपूर्ण थे। एशिया में रूसी विस्तार क्रीमिया युद्ध (1853-56) के पश्चात् प्रारम्भ हुआ, जिसमें फ्रांस, ब्रिटेन, ऑटोमन साम्राज्य और सार्डिनिया (इटली) के गठबंधन से रूस की पराजय हुई। क्रीमिया युद्ध में रूस निर्बल ऑटोमन साम्राज्य के हितों के मूल्य पर विस्तार करना चाहता था जबकि यूरोपीय शक्तियाँ रूस के इस विस्तार के विरुद्ध थीं, क्योंकि इससे पूर्वी यूरोप के रूसी प्रभाव में आने का खतरा था। 1858 में रूस ने अपने सुदूर पूर्वी क्षेत्र और मंचूरिया (चीन) के बीच आधुनिक सीमा की स्थापना के लिए, चीन को अमूर नदी के उत्तर में एक विशाल क्षेत्र रूस को सौंपने पर विवश कर दिया। चीन आज भी रूस से इस क्षेत्र को वापस लेने के लिए प्रयासरत है।



चित्र: अमूर नदी

- इससे रूस को पश्चिमी प्रशांत महासागर में एक बन्दरगाह प्राप्त हो गया। तिब्बत में रूस के प्रभाव को रोकने के लिए 1904 में ब्रिटेन ने अपने सैनिकों को तिब्बत भेजा और तिब्बत की विदेश नीति पर अपना नियंत्रण कर लिया। 1904-05 के रूसी-जापानी युद्ध में हार से निर्बल रूस ने 1907 में ब्रिटेन के साथ एक समझौता कर लिया और तिब्बत एवं अफगानिस्तान को ब्रिटिश प्रभाव क्षेत्र के रूप में मान्यता प्रदान कर दी। इस प्रकार ब्रिटेन भारत और रूस के बीच एक मध्यवर्ती क्षेत्र बनाने में सफल हो गया।
- 1907 के समझौते के अनुसार फारस (ईरान) में उत्तरी ईरान को रूसी प्रभाव क्षेत्र और दक्षिणी ईरान को ब्रिटिश प्रभाव क्षेत्र के रूप में मान्यता प्राप्त हो गई और मध्य ईरान एक मध्यवर्ती क्षेत्र बन गया, जिसमें दोनों देशों को समान स्वतंत्रता प्राप्त थी।
- एशिया में ब्रिटेन के पास भारत, सीलोन (श्रीलंका), अफगानिस्तान और बर्मा थे।
- 1871 तक चीन के अतिरिक्त सुदूर पूर्व के अधिकांश क्षेत्रों का बंटवारा किसी न किसी शक्ति के प्रभाव क्षेत्र के रूप में हो गया था। रूस के नियंत्रण में एक-तिहाई क्षेत्र था। पूर्वी एशिया में चीन और जापान स्वतंत्र थे। जापान साम्राज्यवाद से बच गया और मेइजी पुनःस्थापना के पश्चात् उसने औद्योगिकरण प्रारम्भ कर दिया। जापान 1890 के दशक में साम्राज्यवादी बन गया और 19वीं और 20वीं शताब्दी में चीन साम्राज्यवादी विस्तार का लक्ष्य बन गया।

22. चीन में साम्राज्यवाद

उपनिवेशवाद के दौर में चीन में घटने वाली घटनाएँ निम्नलिखित हैं: (हालांकि इसे उपनिवेशवाद की अपेक्षा नव-उपनिवेशवाद कहना अधिक प्रासंगिक होगा):

- पुर्तगालियों द्वारा 1514 में चीन की खोज की गई और 1557 में कैंटन में एक व्यापारिक केंद्र की स्थापना के साथ ही उन्होंने चीन के साथ व्यापारिक संबंध स्थापित किया।
- परन्तु चीन ने पृथकता की नीति का अनुसरण किया और व्यापारिक गतिविधियाँ सीमित ही रहीं।



- 19वीं शताब्दी के अफीम युद्धों ने चीन को विश्व के साथ खुलने पर विवश कर दिया अर्थात् व्यापार, विदेशियों का आवागमन और राजनयिक सम्बन्धों की स्थापना होने लगी।
- ऐतिहासिक रूप से, चीन में राष्ट्रीय एकता थी और मांचू वंश ने 1640 से 1911 तक वहां शासन किया। परन्तु, 1840 से 1949 की अवधि में चीन विदेशी हस्तक्षेप, गृहयुद्ध और विघटन का साक्षी बना।
- ताईपिंग विद्रोह (1850-64) एक धार्मिक-राजनीतिक आन्दोलन था, जिसे चीन की प्रादेशिक सेनाओं ने कुचल दिया था।
- 1858 में अमूर नदी के उत्तर का क्षेत्र रूस को सौंपना पड़ा।
- जापान ने 1894-95 में चीन पर आक्रमण किया और चीन के कई भागों को अपने नियंत्रण में कर लिया, विशेषकर मंचूरिया को जापान के आर्थिक प्रभाव में ले लिया गया।
- 1899-1900 में बॉक्सर विद्रोह हुआ। यह विदेशी लोगों की उपस्थिति एवं हस्तक्षेप विरोधी और इसाई-विरोधी था। इसे दबाने के लिए अंग्रेजों ने भारतीय सैनिकों को तैनात किया।
- 1904-05 के रूस-जापान युद्ध में जापान विजयी रहा और रूस द्वारा नियंत्रित क्षेत्रों को अपने नियंत्रण में ले लिया।
- 1911 में मांचू राजवंश को सत्ता से बाहर कर दिया गया और गणतन्त्र की घोषणा कर दी गई।
- 1916 से 1928 तक चीन में कोई भी केन्द्रीय सत्ता अस्तित्व में नहीं थी और विभिन्न प्रान्तों में निजी सेनाओं वाले जनरलों का नियंत्रण था। इस युग को **वॉरलॉर्ड युग (Warlord Era)** के रूप में जाना जाता है।
- कुओमिन्तांग या KMT या नेशनलिस्ट पार्टी का उद्भव वॉरलॉर्ड युग में हुआ और इसने वॉरलॉर्ड युग को 1928 तक पूर्ण रूपेण समाप्त कर दिया। **सन यात सेन** और उसके पश्चात् **च्यांग काई शेक** इसके महत्त्वपूर्ण नेता थे।
- 1920 के दशक के उपरांत KMT और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के मध्य गृह-युद्ध लड़ा गया, जिसमें 1949 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी विजयी हुई, चीन में कम्युनिस्ट सरकार की स्थापना हुई, च्यांग काई शेक भाग कर ताईवान चले गए और वहीं से निर्वासित सरकार का संचालन किया।

22.1. चीन की घटनाओं का विवरण

- 1514 में पुर्तगालियों ने चीन की खोज की और 1557 में कैंटन में एक व्यापारिक केंद्र की स्थापना के साथ ही इन्होंने चीन के साथ व्यापारिक संबंध स्थापित किए। 1730 तक, सभी यूरोपीय राष्ट्र चीन के साथ व्यापार में संलग्न हो गए थे, जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका ने 1784 में चीन के साथ व्यापार प्रारम्भ किया। परन्तु जब यूरोपीय राष्ट्रों, विशेषकर रोम (1870 तक रोम को फ्रांस का समर्थन प्राप्त था। इसलिए फ्रांस की भी चीन में संलिप्तता थी।) के ईसाई प्रचारकों ने चीन के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करना प्रारम्भ कर दिया तो चीन ने पृथकतावादी नीति का अनुसरण किया। चीन ने कुछ चयनित चीनी व्यापारियों के माध्यम से केवल कैंटन बन्दरगाह से सीमित व्यापार की अनुमति प्रदान की।

22.2. प्रथम एवं द्वितीय अफीम युद्ध (1840-42 और 1858)

- 19वीं शताब्दी में, चीन में मांचू वंश की निर्बल सरकार थी। इस समय तक ब्रिटेन चीन का प्रमुख व्यापारिक सहभागी बन गया था परन्तु चीन के आत्मनिर्भर होने और पश्चिम से कम आयात के कारण यह व्यापार संतुलन ब्रिटेन के पक्ष में नहीं था। चूंकि चीनी लोग ब्रिटेन को निर्यात (विशेषरूप से चाय और रेशम) के भुगतान के रूप में केवल सोने जैसी मूल्यवान धातुओं को स्वीकार करते थे अतः अंग्रेजों को व्यापारिक घाटे का सामना करना पड़ रहा था। इस समस्या के समाधान के रूप में अंग्रेजों ने

भुगतान के रूप में अफीम का विनिमय प्रारम्भ कर दिया। चीन ने इसका विरोध किया और परिणामस्वरूप 1840-42 और 1858 में अफीम युद्ध हुए। अफीम युद्धों के पश्चात्, अंग्रेजों ने हांगकांग पर अधिकार कर लिया और चीन से बलपूर्वक व्यापारिक सुविधाएँ प्राप्त कर लीं। उन्होंने व्यापारिक केन्द्रों पर अंग्रेजी सम्प्रभुता की स्थापना भी कर ली। पश्चिमी देशों के साथ व्यापार के विरोध की नीति को समाप्त करने के लिए चीन को विवश किया गया। ब्रिटिश व्यापार एवं ब्रिटिश लोगों के चीन में बसने हेतु चीन के प्रमुख बन्दरगाहों को खोल दिया गया। चीन पर मुक्त व्यापार थोप दिया गया। इसका अर्थ था कि अंग्रेज अब किसी भी चीनी व्यापारी के साथ व्यापार कर सकते थे और साथ ही आयात शुल्क भी कम कर दिए गए। इसके अतिरिक्त एक अंग्रेज राजनयिक स्थायी रूप से चीन में नियुक्त कर दिया गया। चीन में रहने वाले ब्रिटिश नागरिकों पर केवल ब्रिटिश कानून के अंतर्गत ही अभियोग चलाया जा सकता था।



- दो अफीम युद्धों के मध्य, अन्य यूरोपीय राष्ट्र और संयुक्त राज्य अमेरिका ने भी चीन के साथ व्यापारिक अनुबंधों पर हस्ताक्षर किए, परन्तु वे अधिक अनुकूल संधियाँ चाहते थे जिसके परिणामस्वरूप द्वितीय अफीम युद्ध हुआ।
- द्वितीय अफीम युद्ध के पश्चात्, व्यापारिक संधियों में संशोधन किये गए और पहले से अधिक चीनी बन्दरगाहों को व्यापार के लिए खोल दिया गया। यूरोपीय पोतों को चीनी नदियों में आवागमन का अधिकार प्राप्त हो गया और यूरोपीय लोग स्वतंत्र रूप से चीन में यात्रा कर सकते थे। चीन को ईसाई धर्म प्रचारकों की सुरक्षा का वचन देना पड़ा और उन्हें चीन में कहीं भी चर्च स्थापित करने का अधिकार प्राप्त हो गया। यह विडम्बना ही थी कि चीन में धार्मिकता के आयात के साथ अफीम के व्यापार को भी वैध बना दिया गया। द्वितीय अफीम युद्ध के पश्चात्, कई अन्य यूरोपीय राष्ट्र, कुछ दक्षिणी अमेरिकी राष्ट्र और जापान ने चीन के साथ व्यापारिक संबंध स्थापित किये। इस प्रकार चीन को विभिन्न साम्राज्यवादी शक्तियों के लिए खोल दिया गया, जिन्होंने धीरे-धीरे सम्पूर्ण चीन में अपने प्रभाव क्षेत्र स्थापित कर लिए।

22.2.1. 1858 में अमूर नदी के उत्तर का क्षेत्र रूस को सौंपना पड़ा

- 1858 में चीन निर्बल था। यह द्वितीय अफीम युद्ध में हार रहा था और साथ ही ताईपिंग विद्रोह का भी सामना कर रहा था। 1858 में रूस ने आक्रमण की धमकी दी और परिणामस्वरूप चीन को अमूर नदी के उत्तर का बहुत बड़ा क्षेत्र रूस को सौंपने के लिए विवश होना पड़ा।

22.2.2. मांचू राजवंश और वॉरलॉर्ड युग

- मांचू राजवंश ने चीन पर 1640 से 1911 तक शासन किया। 1840 के दशक में प्रथम अफीम युद्ध तक मांचू शासकों ने पृथक्तावाद या अलगाव की नीति का अनुसरण किया। यह अपनी अलगाववादी नीति को बनाए रखने में सक्षम था, क्योंकि चीन सभी वस्तुओं के लिए आत्मनिर्भर था और वास्तव में उसका शेष विश्व के साथ व्यापार संतुलन (BoT) बहुत ही सकारात्मक था। इसकी चाय अंग्रेजों द्वारा अपने साम्राज्य और शेष विश्व में पहुंचा दी गई। वास्तव में, बोस्टन टी पार्टी की चाय भी चीनी चाय थी। चीन में कोई बड़ा उथलपुथल नहीं हुआ था और 1840 के दशक तक यह सामान्यतः शांत ही रहा। 1840 में यूरोपीय राष्ट्रों ने व्यापारिक सम्भावनाओं का लाभ उठाने के लिए चीन में बलपूर्वक अपना मार्ग प्रशस्त किया। उनका उद्देश्य चीन को कच्चे माल का निर्यातक और तैयार माल का आयातक बनाना था। चीन में हस्तक्षेप करने वाला पहला देश ब्रिटेन था। इसने अफीम युद्ध लड़ा और इसमें विजय प्राप्त की इसके परिणामस्वरूप चीन को अपनी अलगाववादी नीति को समाप्त करने के लिए विवश होना पड़ा। अन्य यूरोपीय राष्ट्रों ने भी ब्रिटेन का अनुसरण किया और चीन को अपने प्रभाव क्षेत्रों में विभाजित कर दिया। प्रभाव क्षेत्र वे क्षेत्र थे जहाँ विशिष्ट यूरोपीय राष्ट्रों को विशेष बन्दरगाहों पर विशेष अधिकार और सुविधाएँ प्राप्त थीं। इसके पश्चात् 19वीं और 20वीं शताब्दी के आरम्भ में संयुक्त राज्य अमेरिका ने खुले द्वार की नीति (Open Door Policy) थोप दी, जहाँ किसी अन्य राष्ट्र के मामलों में हस्तक्षेप किए बिना, सभी राष्ट्र चीन से व्यापार करने के लिए स्वतंत्र थे।



- 1850-64 की अवधि में दक्षिणी चीन में **ताईपिंग** विद्रोह हुआ। यह आंशिक रूप से धार्मिक और आंशिक रूप से राजनीतिक आन्दोलन था, जिसका उद्देश्य माँचू राजवंश के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह के माध्यम से **पूर्ण शांति का दिव्य साम्राज्य** (Heavenly Kingdom of Great Peace) स्थापित करना था। ईसाई ताईपिंग विद्रोहियों ने सम्पत्ति में सहभागिता (परिवार के सदस्यों की संख्या के अनुसार भूमि का वितरण), महिलाओं को समानता और कन्फ्यूशियसवाद, बौद्ध धर्म तथा चीनी लोक धर्म को ईसाई धर्म से प्रतिस्थापित करने की मांग की। ताईपिंग विद्रोह को कुचल दिया गया, परन्तु केन्द्रीय सरकार द्वारा नहीं, अपितु प्रांतीय सेनाओं द्वारा। माँचू शासकों के नियंत्रण और उनकी प्रतिष्ठा में गिरावट ने प्रान्तों को केन्द्रीय सरकार से स्वतंत्र होने के लिए प्रोत्साहित किया। यह प्रक्रिया वॉरलॉर्ड युग में (1916-28) आरम्भ हुई, जहाँ वास्तविक शक्ति क्षेत्रीय सेनाओं के पास थी जिनका नेतृत्व विभिन्न वॉरलॉर्ड्स करते थे।

22.2.3. पांच प्रमुख घटनाएँ

वॉरलॉर्ड युग के प्रारम्भ होने से पूर्व पांच प्रमुख घटनाएँ घटित हुईं:

- **चीन-जापान युद्ध (1894-95):** यह युद्ध मुख्यतः कोरिया के लिए लड़ा गया था, जो अब तक चीन के नियंत्रण में था। हार के पश्चात् चीन ने कोरिया को एक स्वतंत्र राज्य के रूप में मान्यता प्रदान कर दी (*जापान ने 1910 में कोरिया पर अधिकार किया)। इसके अतिरिक्त चीन को दक्षिणी चीन के कुछ क्षेत्र जापान को देने हेतु विवश किया गया। फॉर्मोसा (ताईवान) पर जापान ने अधिकार कर लिया। इस युद्ध के पश्चात् दक्षिण चीन सागर में स्थित सेनकाकू द्वीप पर जापान ने कब्जा कर लिया। यह द्वीप आज भी चीन और जापान के मध्य विवाद का मुद्दा बना हुआ है। इसके अतिरिक्त मंचूरिया भी जापान के आर्थिक प्रभाव में आ गया, जहाँ उसने 1890 में अत्यधिक पूँजी निवेश किया। अपने समृद्ध कोयला भंडारों और खनिज संसाधनों के कारण मंचूरिया बहुत ही महत्वपूर्ण था। यह प्रशांत महासागर तक पहुंच भी प्रदान करता था।
- **बॉक्सर विद्रोह (1899-1900):** 1900 तक चीन को विभिन्न प्रभाव क्षेत्रों में विभाजित कर दिया गया था (इस प्रकार से चीन को एक अंतर्राष्ट्रीय उपनिवेश के रूप में बदल दिया गया)। शीघ्र ही चीन ने यह अनुभव किया कि इन प्रभाव क्षेत्रों के कारण चीन का विभाजन हो जाएगा, और प्रत्येक साम्राज्यवादी शक्ति अपने प्रभाव क्षेत्र पर शासन करेगी। बॉक्सर विद्रोह राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप के विरुद्ध विद्रोह था जिसे ब्रिटिश-रूसी-फ्रांसीसी-जापानी-अमेरिकी सेनाओं द्वारा कुचल दिया गया। चीन की महारानी को चीन में विदेशी सम्पत्तियों को हुई क्षति हेतु भारी मुआवजा देने के लिए विवश किया गया। इसके पश्चात् बॉक्सर प्रोटोकॉल पर हस्ताक्षर किये गए और विदेशी शक्तियों को चीन में अपने नागरिकों की सुरक्षा के लिए अपने सैनिकों को तैनात करने की अनुमति प्राप्त हो गई। इस संधि के पश्चात् रूस ने मंचूरिया के सभी भागों पर अधिकार कर लिया।
- **रूस-जापान युद्ध (1904-05):** यह युद्ध मंचूरिया पर अधिकार के लिए लड़ा गया था। जापान इस युद्ध में विजयी हुआ और चीन में स्थित रूसी सम्पत्तियों का अधिग्रहण कर लिया। इस प्रकार और अधिक चीनी क्षेत्र जापान के नियंत्रण में आ गया। इस युद्ध के परिणामस्वरूप:
 - जापान को दक्षिण मंचूरिया में विशेषाधिकार की स्थिति प्राप्त हो गई (अर्थात् दक्षिण मंचूरिया को जापान ने अपने प्रभाव क्षेत्र में परिवर्तित कर दिया) और उसे आर्थर बन्दरगाह भी प्राप्त हो गया।
 - 1905 में जापान ने स्वतंत्र कोरिया को अपने संरक्षित क्षेत्र में परिवर्तित कर दिया और लियोतुंग प्रायद्वीप पर नियंत्रण स्थापित कर लिया।
 - रूस ने सखालिन द्वीपों का आधा क्षेत्र जापान को सौंप दिया।इस विजय ने जापान को एक प्रमुख विश्व शक्ति के रूप में स्थापित कर दिया। अमेरिका, चीन में रूसी वर्चस्व का विरोधी था। रूस-जापान युद्ध में अमेरिकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने मध्यस्थता की और जापान के अर्जित क्षेत्रों को स्वीकृति प्रदान करने के लिए रूस को राजी कर लिया। अमेरिका ने जापान के साथ गुप्त अनुबंध किया ताकि उन क्षेत्रों में अमेरिका को स्वतंत्र रूप से व्यापार करने की अनुमति प्राप्त हो सके। इस प्रकार अमेरिका ने जापान के तुष्टीकरण की नीति आरम्भ की, जिससे जापान के साम्राज्यवाद को बढ़ावा मिला और इसे एक प्रमुख शक्ति और प्रशांत क्षेत्र में अमेरिका का प्रतिद्वंद्वी बनने में सहायता

मिली। एक ओर तो एक एशियाई देश के हाथों रूस की पराजय ने एशियाई लोगों को उनके स्वतन्त्रता संघर्षों में मानसिक रूप से प्रोत्साहित किया तो दूसरी ओर रूस में ज़ार के शासन को निर्बल कर दिया। यह पराजय ज़ार के पतन का एक महत्वपूर्ण कारण बनी और 1905 में रूसी क्रांति के परिणामस्वरूप ज़ार का शासन समाप्त हो गया। 1905 की रूसी क्रांति के फलस्वरूप रूस में सीमित संविधानिक राजतन्त्र अस्तित्व में आया और अंततः 1917 में कम्युनिस्ट शासन की स्थापना हुई।



- 1900 के प्रारम्भ में पश्चिम में शिक्षित चीनी युवक उग्र क्रान्तिकारी विचारों के साथ चीन आए। वे मांचू राजवंश को उखाड़ फेंकना चाहते थे और उनमें से **सन यात सेन** जैसे कुछ लोग संयुक्त राज्य अमेरिका जैसा लोकतंत्र स्थापित करना चाहते थे। **सन यात सेन** ने **कुओमिन्तांग** या **KMT** या **नेशनलिस्ट पार्टी** का गठन किया।
- **1911 में गणतन्त्र**: 1911 की क्रांति में अधिकांश प्रान्तों ने स्वयं को स्वतंत्र घोषित कर दिया और इसी के साथ मांचू राजवंश का शासन समाप्त हो गया। नई सरकार ने युवा बुद्धिजीवियों द्वारा मांगे गए लोकतान्त्रिक सुधारों को लाने का प्रयास किया। परन्तु प्रांतीय सेनाओं ने इन सुधारों का विरोध किया और 1911 के सैन्य तख्तापलट में नई सरकार को सत्ता से बाहर कर दिया। युआन शी काई नामक सैन्य जनरल ने स्वयं को राष्ट्रपति घोषित करते हुए चीन को गणतन्त्र घोषित कर दिया। परन्तु जब प्रांतीय सेनाओं की इच्छा के विरुद्ध, युवान ने स्वयं को 1915 में सम्राट घोषित किया तो उसे सत्ताच्युत कर दिया गया और इसके परिणामस्वरूप वारलॉर्ड युग (1916-28) का प्रारम्भ हो गया।

22.2.4. प्रथम विश्व युद्ध (1914-19)

- प्रथम विश्व युद्ध (1914- 19) के दौरान, जापान ने कियाचो द्वीपों और शान्तुंग प्रांत के रूप में और अधिक चीनी प्रदेशों पर कब्जा कर लिया। हालांकि, 1921 में वाशिंगटन सम्मेलन के दौरान प्रशांत महासागर में अमेरिकी, ब्रिटिश और फ्रांसीसी नौसेनाओं की उपस्थिति को सीमित करने के बदले जापान इन प्रदेशों को मुक्त करने पर सहमत हो गया।

22.2.5. वॉरलॉर्ड्स युग (1916-28)

- इस समय चीन कई राज्यों में विभाजित था, प्रत्येक राज्य एक वॉरलॉर्ड के नियंत्रण में था जो अपनी निजी सेना के सहयोग से आपस में लड़ते रहते थे। वॉरलॉर्ड युग में चीन में अराजकता पैदा हुई जिससे किसानों को सबसे अधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

22.2.6. 4 मई का आंदोलन (1919)

- **4 मई का आंदोलन (1919)** सामंतों और प्रतिगामी चीनी संस्कृति के विरुद्ध चीनी युवाओं द्वारा आरंभ किया गया एक आंदोलन था। इस आन्दोलन में छात्रों ने बड़े पैमाने पर विरोध प्रदर्शन किया। 1921 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना की गई और यह किसानों के हितों के प्रति सहानुभूति रखती थी, जो वॉरलॉर्ड युग के दौरान समाज का सबसे शोषित वर्ग था। इसके साथ ही, च्यांग काई शेक के नेतृत्व में कोमिन्तांग स्वयं को सैन्य दृष्टि से मजबूत बना रहा था और इसने 1927-28 के अंत तक वॉरलॉर्ड का शासन समाप्त करने और देश में एकता कायम करने में सफलता प्राप्त कर ली। कोमिन्तांग चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की साम्यवादी विचारधारा के विरुद्ध था। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने भूमि के पुनर्वितरण जैसे उपायों के माध्यम से कृषक कल्याण पर ध्यान केंद्रित किया, जबकि कोमिन्तांग जमींदार समर्थक था और यह भूमि के पुनर्वितरण जैसे उपायों का विरोधी था। सैन्य रूप से मजबूत होने के कारण 1927 तक कोमिन्तांग कम्युनिस्टों पर हावी रहा।

22.2.7. कोमिन्तांग और सन यात सेन



- कोमिन्तांग दल का गठन 1912 में डॉ. सन यात सेन ने किया था। वह 1911 की क्रांति के बाद चीन वापस लौट आए थे। कोमिन्तांग का लक्ष्य संयुक्त, लोकतांत्रिक और आधुनिक चीन की स्थापना करना था। हालांकि कोमिन्तांग की विचारधारा साम्यवादी नहीं थी, लेकिन प्रारंभिक चरण में यह साम्यवादियों के साथ सहयोग करने के लिए तैयार था। डॉ. सन यात सेन ने वॉरलॉर्ड युग के दौरान चीनी विघटन का विरोध किया था। उनकी नीति का विश्लेषण **राष्ट्रवाद, लोकतंत्र और भूमि सुधार** के तीन सिद्धांतों में किया जा सकता है। राष्ट्रवाद द्वारा, वह चीनी मामलों में विदेशी हस्तक्षेप का अंत और एक महान राष्ट्र का निर्माण करना चाहते थे, जबकि लोकतंत्र द्वारा वह वॉरलॉर्ड्स का शासन समाप्त करना चाहते थे। भूमि सुधार के सिद्धांतों के अंतर्गत, वह जमींदारों से भूमि की तत्काल जब्ती के पक्ष में नहीं थे, बल्कि उन्होंने किसानों से वादा किया कि वे किसानों के पक्ष में भविष्य में भूमि के पुनर्वितरण का प्रयास करेंगे साथ ही उनके आर्थिक विकास और लगान कम करने के लिए भी प्रयास करेंगे।
- डॉ. सन यात सेन अपने लक्ष्य में केवल आंशिक रूप से सफल रहे। 1912 में, वह दक्षिणी वॉरलॉर्ड्स की सहायता से दक्षिण चीन के कैंटन में सैन्य सरकार बनाने में सफल रहे। इस प्रकार, लोकतंत्र का उद्देश्य नहीं प्राप्त हो सका। पुनः कोमिन्तांग के पास शक्तिशाली सेना के अभाव के कारण दक्षिणी चीन के बाहर डॉ. सन यात सेन का प्रभाव आंशिक ही था। दक्षिणी सामंतों के साथ उनका गठजोड़ 1921 में समाप्त हो गया और उसके बाद उन्हें कैंटन से पलायन करना पड़ा और चीन के एकीकरण के लिए सोवियत रूस की सहायता मांगनी पड़ी, जिसने कोमिन्तांग की सेना का आधुनिकीकरण करने और प्रशिक्षित करने में सहायता प्रदान की। वह राष्ट्रवाद की भावना पैदा करने में सफल रहे और बौद्धिक राजनीतिज्ञ के रूप में प्रसिद्ध हुए लेकिन विदेशी हस्तक्षेप समाप्त नहीं कर पाए तथा चीन को महान राष्ट्र नहीं बना पाए। 1925 में 59 वर्ष की आयु में उनकी मृत्यु हो गई, जिसके बाद च्यांग काई शेक कोमिन्तांग का नेता बना।

22.2.8. च्यांग काई शेक

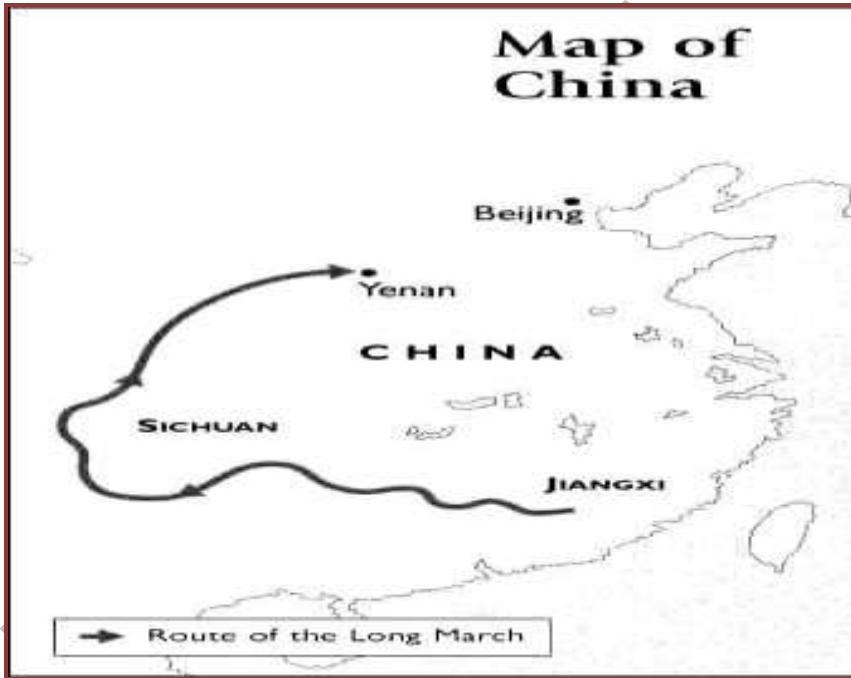
- 1925 के बाद, सैन्य रूप से प्रशिक्षित च्यांग काई शेक ने सोवियत सहायता से कोमिन्तांग की सेना का आधुनिकीकरण किया। हालांकि उसने सोवियत रूस की कम्युनिस्ट पार्टी और लाल सेना की कार्यप्रणाली का अध्ययन किया था परन्तु उसकी विचारधारा दक्षिणपंथी थी और वह पूंजीवादी वर्ग का समर्थक था। उसने 1925 में कोमिन्तांग से सभी कम्युनिस्ट सदस्यों को निकाल दिया और इससे सिद्ध होता है कि वह अपने पूर्ववर्ती सन यात सेन की तुलना में कम सहिष्णु था।

22.2.9. चीनी कम्युनिस्ट पार्टी (1921 के बाद)

- कोमिन्तांग का लक्ष्य चीन में लोकतंत्र की स्थापना करना था। सोवियत रूस ने 1921 के बाद से कोमिन्तांग के नेतृत्व में एक मित्रवत और संयुक्त चीन की उम्मीद के साथ नकदी, सैन्य प्रशिक्षण और हथियारों के रूप में कोमिन्तांग की सहायता करना आरंभ कर दिया। वहीं दूसरी ओर, 1921 में वामपंथी बुद्धिजीवियों ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का गठन किया। कोमिन्तांग और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी दोनों को वॉरलॉर्ड्स युग के दौरान कृषकों और मजदूरों का समर्थन मिला।
- उत्तरी अभियान (Northern March: 1926) वॉरलॉर्ड्स के विरुद्ध कोमिन्तांग और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का सैन्य अभियान था। 1927 में, वॉरलॉर्ड्स के विरुद्ध अपनी विजय के बाद, कोमिन्तांग ने शुद्धीकरण आंदोलन आरंभ किया। यह चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के विरुद्ध कोमिन्तांग का अभियान था। इस दौरान मजदूर और किसान नेताओं के साथ-साथ चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों का भी संहार किया गया। वस्तुतः इस दौरान चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को काफी हद तक समाप्त कर दिया गया।



- लेकिन सत्ता में आने वाली अनुवर्ती कोमिन्तांग सरकार जनता की आकांक्षाएं पूरा करने में विफल रही। यह सरकार अक्षम और भ्रष्ट थी। जमींदारों, उद्योगपतियों और सरकारी अधिकारियों के मध्य गठजोड़ विकसित हुआ, जिसका परिणाम गरीबों के शोषण के रूप में सामने आया। श्रमिक कार्य की खराब स्थितियों से पीड़ित थे, जबकि कृषक भूमि सुधारों के अभाव, ऊंचे करों और बेगार से त्रस्त थे।
- 1930 से लेकर 1934 तक, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को नष्ट करने के लिए कोमिन्तांग ने **घेराबंदी अभियान (Encirclement Campaigns)** चलाया। इसकी रणनीति चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को उसके आधार पर घेरने और युद्ध में उन्हें नष्ट करने की थी। 1934 में कम्युनिस्ट पलायन इस संदर्भ में प्रसिद्ध है, जिसमें चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के 1 लाख कार्यकर्ता दक्षिण-पश्चिम चीन में कोमिन्तांग की घेराबंदी के बावजूद चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के मुख्यालय से निकलने में सफल रहे और वे दक्षिण-पश्चिम चीन से उत्तर में पहाड़ों तक 6000 मील लॉन्ग मार्च पर निकल पड़े। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यकर्ताओं ने एक वर्ष में 6000 मील की दूरी तय की (लगभग 9600 कि.मी.) तथा अपने मार्ग में उन्होंने पहाड़ों और नदियों को पार किया एवं कोमिन्तांग के सहयोगी वॉरलॉर्ड्स से युद्ध करते हुए कई प्रदेशों पर अधिकार कर लिया। 1 लाख में से केवल 20 हजार सदस्य जीवित बचे और उन्होंने सेंसी प्रांत में अपना नया आधार स्थापित किया।



- किसानों की सहायता से चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के शेष बचे नेतृत्व ने, विशेषकर माओ त्से तुंग ने पार्टी को पुनःस्थापित किया। इसके पश्चात् चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने धीरे-धीरे और अधिक क्षेत्रों को अपने नियंत्रण में लाना आरंभ किया। उन्होंने उचित प्रशासन प्रदान किया और अपने नियंत्रणाधीन क्षेत्रों में कृषकों के हित में भूमि सुधारों को प्रारंभ किया, जिससे उन्हें आम जनता का और अधिक समर्थन प्राप्त हुआ।
- 1931 में जापान ने मंचूरिया पर आक्रमण कर दिया और वहां कठपुतली सरकार (मंचुकुओ) की स्थापना की। 1931 से, चीन के विरुद्ध जापानी आक्रामकता की छोटी-छोटी स्थानीय "घटनाएं" होती रहीं। लेकिन कोमिन्तांग ने जापानियों के विरुद्ध पूरी ऊर्जा लगाने की बजाय चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यकर्ताओं पर हमला करना जारी रखा। अपने ही सैनिकों के दबाव के चलते, कोमिन्तांग को 1936 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के साथ युद्धविराम करना पड़ा और इसके बाद दोनों ने जापानी आक्रमण के विरुद्ध एक साथ मिलकर लड़ाई लड़ी, जिसने 1937 में चीन पर जापानी आक्रमण के दौरान पूर्णव्यापी युद्ध का रूप धारण कर लिया। इसे **द्वितीय चीन-जापान युद्ध (1937-45)** कहा जाता है जोकि द्वितीय विश्व युद्ध का ही एक भाग था।
- कोमिन्तांग बलों को शीघ्रतापूर्वक जापानी सेना ने हरा दिया जबकि चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यकर्ताओं को अपनी गुरिल्ला युद्ध रणनीति के कारण अधिक सफलता मिली। इससे कम्युनिस्टों का

समर्थन आधार बढ गया और इन्हें अब देशभक्तों के रूप में देखा जाने लगा। इसके साथ ही, माओ (जो 1931 से ही चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का अध्यक्ष था) ने सुधार प्रक्रिया शुरू करने में विलंब नहीं किया और युद्ध के बीच में ही जितनी जल्दी संभव हुआ इसे आरंभ कर दिया। उदाहरण के लिए, 1942 में इसने एक **परिशोधन कार्यक्रम** (Rectification programme) आरंभ किया जिसके अंतर्गत किसानों के जीवन की कठिनाइयों को समझने और समानुभूति प्रकट करने के लिए बुद्धिजीवियों, छात्रों और शहरी युवाओं को कृषकों के साथ खेतों पर काम करने के लिए दूर-दराज के गांवों में भेजा गया। इस प्रकार, चीन-जापान युद्ध के दौरान चीनी कम्युनिस्ट पार्टी अपनी गुरिल्ला युद्ध नीति के माध्यम से एवं अधिक से अधिक चीनी किसानों और श्रमिकों को भर्ती करके चीन पर अपना सैन्य नियंत्रण बढ़ाने में सफल रही।



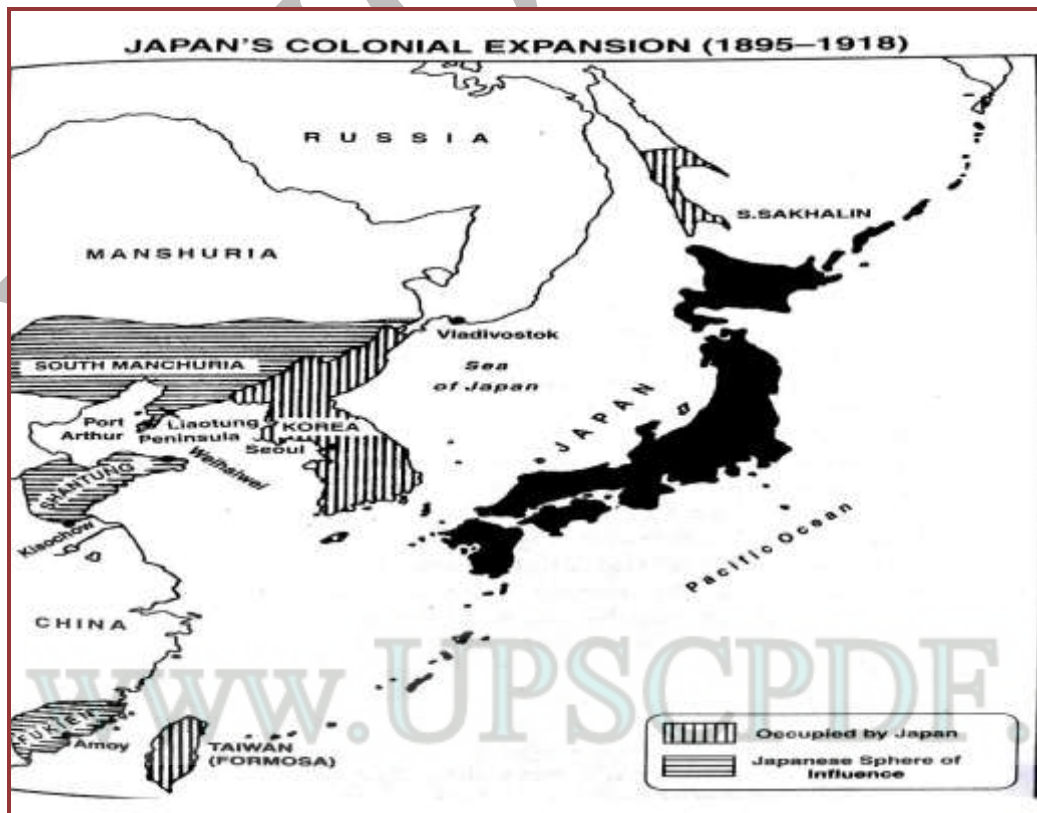
- 1945 के बाद, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और कोमिन्तांग के बीच पुनः गृहयुद्ध आरंभ हो गया। जापान को हराने के बाद अमेरिका और सोवियत संघ ने चीन में जापान के नियंत्रण वाले क्षेत्रों पर कब्जा कर लिया था। चूंकि अमेरिका साम्यवाद के विरुद्ध था, अतः उसने अपने कब्जे वाला क्षेत्र कोमिन्तांग को सौंप दिया जबकि रूस ने मंचुरिया को चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को सौंप दिया। इस प्रकार, अब चीनी गृहयुद्ध शीत युद्ध का भाग बन गया, जिसमें अमेरिका कोमिन्तांग का समर्थन कर रहा था और सोवियत संघ चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का समर्थन कर रहा था।
- 1949 तक, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का नियंत्रण लगभग सम्पूर्ण चीन पर हो चुका था क्योंकि उसकी लाल सेना अपेक्षाकृत बड़ी और सोवियत हथियारों से भलीभांति सुसज्जित थी। इसने च्यांग काई शेक को ताइवान भागने के लिए विवश किया जहां च्यांग काई शेक ने निर्वासित चीनी सरकार की स्थापना की। संयुक्त राज्य अमेरिका ने इस सरकार को चीन की वैध सरकार के रूप में मान्यता दी, जबकि विश्व के मानचित्र पर चीन के मुख्य भूमि वाले क्षेत्र में एक नए साम्यवादी देश का उदय हुआ।

23. साम्राज्यवादी जापान

- 1868 से पहले जापान में निम्नलिखित स्थितियां विद्यमान थीं:
 - **राजनीतिक व्यवस्था:** सम्राट केवल प्रतीक मात्र था। वास्तविक शक्ति सैन्य जनरलों के पास थी जिन्हें *शोगुन (shoguns)* कहा जाता था।
 - **सामाजिक व्यवस्था:** जापान की सामाजिक व्यवस्था सामंती यूरोप के सामान थी।
 - **अंतर्राष्ट्रीय संपर्क:** 200 से भी अधिक वर्षों से जापान का शेष विश्व से कोई संपर्क नहीं था।
- लगभग 1850 के दशक में जापान की स्वतंत्रता खतरे में पड़ गई। अमेरिका ने 1853 में एक नौसैनिक बेड़ा जापान भेजा और जापान को अमेरिकी जहाजों के लिए दो बंदरगाह खोलने पर विवश किया तथा व्यापार की अनुमति प्राप्त की। अगले कुछ वर्षों में यूरोपीय शक्तियों के साथ भी इसी तरह की संधियों पर हस्ताक्षर किए गए।
- **मेइजी पुनर्स्थापना (1868):** 1868 में शोगुनों का शासन समाप्त हो गया और सलाहकारों के एक नए समूह ने सम्राट के नाम पर शासन करना आरंभ किया। इस प्रकार सम्राट की सर्वोच्चता कम से कम कागजों पर पुनर्स्थापित हो गई। सम्राट ने मेइजी की उपाधि ग्रहण की और इन परिवर्तनों को सामूहिक रूप से **मेइजी पुनर्स्थापना** कहा गया। 1868 से 1908 तक जापान एक औद्योगिक राष्ट्र के रूप में उभरा। प्रारंभ में सरकार ने उत्तरदायित्व लेते हुए भारी उद्योगों में अत्यधिक निवेश किया। बाद में इन उद्योगों को पूंजीपतियों को बेच दिया गया, जो शीघ्र ही आत्मनिर्भर बनकर उभरे। इसके साथ ही प्रभावी शिक्षा कार्यक्रम ने जापानियों को बहुत तेजी से साक्षर बनाना सुनिश्चित किया जिससे द्रुत औद्योगिकीकरण के लिए आवश्यक कुशल कार्यबल की उपलब्धता भी सुनिश्चित हुई। शिक्षा कार्यक्रम में उग्र राष्ट्रवाद और सम्राट की पूजा पर जोर दिया गया। इसने लोगों को राष्ट्रीय आर्थिक विकास के लिए कड़ी मेहनत करने के लिए प्रोत्साहित किया और बाद में होने वाले साम्राज्यवाद के औचित्य को सही ठहराने में भी सहायता प्रदान की। 1889 में एक नया संविधान बनाया गया जिसके अनुसार मंत्री सम्राट के प्रति उत्तरदायी थे न कि डायट (संसद) के प्रति। सम्राट को देव तुल्य समझा जाता था। सेना और नौसेना के अधिकारियों की नियुक्ति में मंत्रियों और डायट की कोई भागीदारी नहीं थी। डायट के पास सीमित वित्तीय शक्तियाँ थीं। मताधिकार केवल 3% आबादी को दिया गया था। इस प्रकार जापान के राजनीतिक मामलों पर धीरे-धीरे जापानी सेना का वर्चस्व स्थापित हो गया।



- जापान एक छोटा सा द्वीपीय देश था, जहां अधिकांश लोग बहुत मामूली मजदूरी पर निर्वाह करते थे। इस प्रकार जापान में घरेलू बाजार का अभाव था। जापान को अपने नए विकसित हो रहे उद्योगों का पोषण करने के लिए निर्यात बाजारों और कच्चे माल की आवश्यकता थी, जिसकी तलाश में उसे उपनिवेशवाद का आश्रय लेना पड़ा। कोयला और खनिज के समृद्ध भंडारों के कारण मंचूरिया बहुत महत्वपूर्ण था। साथ ही यह प्रशांत महासागर तक पहुंच भी प्रदान करता था। 1858 के बाद से मंचूरिया पर रूस के नियंत्रण से जापान असंतुष्ट था।
- **चीन-जापान युद्ध (1894-95):** यह युद्ध मुख्यतः कोरिया के लिए लड़ा गया था, जो अब तक चीन के नियंत्रण में था। हार के पश्चात् चीन ने कोरिया को एक स्वतंत्र राज्य के रूप में मान्यता प्रदान कर दी (*जापान ने 1910 में कोरिया पर अधिकार किया)। इसके अतिरिक्त चीन को दक्षिणी चीन के कुछ क्षेत्र जापान को देने हेतु विवश किया गया। फॉर्मोसा (ताईवान) पर जापान ने अधिकार कर लिया। इस युद्ध के पश्चात् दक्षिण चीन सागर में स्थित सेनकाकू द्वीप पर जापान ने कब्जा कर लिया। यह द्वीप आज भी चीन और जापान के मध्य विवाद का मुद्दा बना हुआ है। इसके अतिरिक्त मंचूरिया भी जापान के आर्थिक प्रभाव में आ गया।
- **रूस-जापान युद्ध (1904-05):** यह युद्ध मंचूरिया पर अधिकार के लिए लड़ा गया था। जापान इस युद्ध में विजयी हुआ और चीन में स्थित रूसी सम्पत्तियों का अधिग्रहण कर लिया। इस प्रकार और अधिक चीनी क्षेत्र जापान के नियंत्रण में आ गया। इस युद्ध के परिणामस्वरूप:
 - जापान को दक्षिण मंचूरिया में विशेषाधिकार की स्थिति प्राप्त हो गई (अर्थात् दक्षिण मंचूरिया को जापान ने अपने प्रभाव क्षेत्र में परिवर्तित कर दिया) और उसे ऑर्थर बन्दरगाह भी प्राप्त हो गया।
 - 1905 में जापान ने स्वतंत्र कोरिया को अपने संरक्षित क्षेत्र में परिवर्तित कर दिया और लियोतुंग प्रायद्वीप पर नियंत्रण स्थापित कर लिया।
 - रूस ने सखालिन द्वीपों का आधा क्षेत्र जापान को सौंप दिया।
- जापान ने 1910 में कोरिया पर अधिकार स्थापित कर लिया। प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान, जापान चीन को अपने संरक्षित राज्य में परिवर्तित करना चाहता था लेकिन ऐसा करने में वह विफल रहा।
- जापान ने 1931 में मंचूरिया पर आक्रमण कर दिया और मांचकुओ के कठपुतली राज्य की स्थापना की।
- **चीन-जापान युद्ध (1937-45):** 1937 में जापान ने चीन पर आक्रमण कर दिया। बाद में यह युद्ध द्वितीय विश्व युद्ध का भाग बन गया।



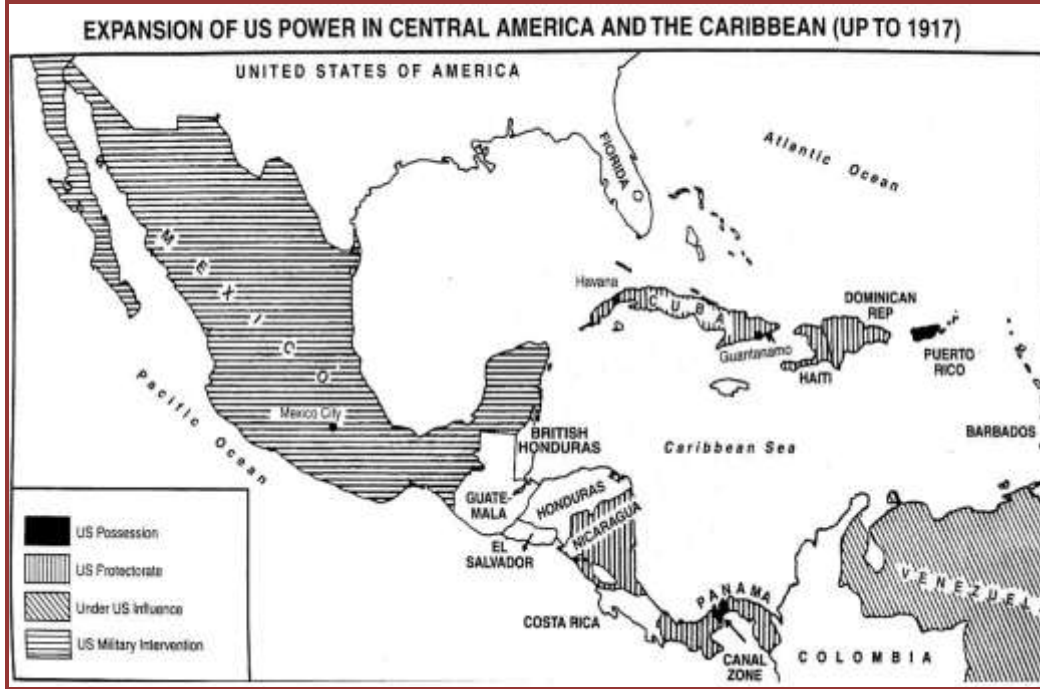


- 1930 के दशक की शुरुआत में आर्थिक और सामाजिक समस्याओं के कारण जापान में सैन्य तानाशाही की स्थापना हुई। इसने चीन में अपने साम्राज्यवादी अभियानों को बढ़ावा दिया। 1921 के मध्य तक जापान आर्थिक रूप से काफी मजबूत हो चुका था। जापान प्रथम विश्व युद्ध (1914-1919) से लाभान्वित हुआ था क्योंकि युद्ध के बाद यूरोपीय शक्तियाँ आर्थिक रूप से कमजोर हो गई थीं और वर्साय की संधि को लेकर हुए विवादों में व्यस्त थीं। यूरोपीय देशों की आर्थिक कमजोरी ने उनके निर्यातों को कम प्रतिस्पर्धी बना दिया। इसके साथ ही, वे सैन्य रूप से भी कमजोर हो चुके थे और इस कारण जापानी आक्रामकता पर लगाम लगाने की स्थिति में नहीं थे। जापान के साम्राज्यवादी अभियान पर लगाम लगाने के लिए एकमात्र पर्याप्त शक्तिशाली देश अमेरिका था, लेकिन वह स्वयं प्रथम विश्व युद्ध से निराश था और अलगव की नीति का पालन कर रहा था, जिसके कारण अमेरिका वैश्विक मामलों में अहस्तक्षेप की नीति का पालन कर रहा था और किसी भी कीमत पर किसी भी अन्य देश के साथ सैन्य संघर्ष को टाल रहा था। फलस्वरूप, जापान ने इस स्थिति का पूरा लाभ उठाया। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान 1918 तक मित्र देशों को नौवहन और अन्य वस्तुओं का निर्यात करके जापान आर्थिक रूप से लाभान्वित हुआ था। उसने निर्यात बाजारों में, विशेषकर एशिया में, यूरोपीय कंपनियों को प्रतिस्थापित कर दिया और ऐसी वस्तुओं के *सप्लाई ऑर्डर्स* प्राप्त करने लगा, जिनकी आपूर्ति यूरोपीय नहीं कर सकते थे। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान, जापान का सूत निर्यात तीन गुना हो गया था और व्यापारी जहाज दोगुने हो गए थे।
- जापान की सामाजिक स्थितियाँ भी उसकी साम्राज्यवादी प्रवृत्तियों के लिए उत्तरदायी थीं। सेना और रुढ़िवादियों जैसे समाज के प्रभावशाली वर्ग लोकतंत्र के विरुद्ध थे और प्रायः सरकार की आलोचना करते थे। सेना चीन के प्रति सरकार के नरम और सौहार्द्रपूर्ण दृष्टिकोण के विरुद्ध थी, क्योंकि वह औपनिवेशिक साम्राज्य का विस्तार करने के लिए चीन में चल रहे गृहयुद्ध का लाभ उठाना चाहती थी।
- सैन्य तानाशाही की स्थापना में जापान की आर्थिक स्थितियों ने भी भूमिका निभाई। आर्थिक उत्कर्ष 1921 तक समाप्त हो गया था, क्योंकि यूरोपीय देश आर्थिक रूप से पुनः संभल गए थे और अब अपने खोए निर्यात बाजारों पर पुनः कब्जा कर रहे थे। जापान में, बेरोजगारी बढ़ गई और किसान भरपूर फसल के कारण चावल की कीमतों में हुई तीव्र कमी से प्रभावित हुए। मजदूरों और किसानों के प्रदर्शनों को क्रूरतापूर्वक दबा दिया गया था जिसके परिणामस्वरूप वे भी सरकार के विरुद्ध हो गए। वैश्विक आर्थिक संकट ने इन घटनाओं के उत्प्रेरक के रूप में कार्य किया क्योंकि आयातक देश आयात के लिए भुगतान करने की स्थिति में नहीं थे जिससे जापानी निर्यात बुरी तरह से प्रभावित हुआ। मंचूरिया में चीनी कंपनियों जापानी कंपनियों का स्थान लेने का प्रयास कर रहीं थीं और यहाँ पर भी जापानी व्यापार और कारोबार खतरे में था। 1929 के आर्थिक संकट की पृष्ठभूमि में यह असहनीय था। सरकार की जानकारी के बिना सेना ने 1932 में मंचूरिया पर आक्रमण कर दिया और आक्रमण का विरोध करने

पर 1932 में प्रधान मंत्री की हत्या कर दी गई। 1945 तक जापान की सेना ने देश पर फासीवादी तरीके से शासन किया। सम्राट को उच्च प्रतिष्ठा प्राप्त थी, लेकिन वह भी जापानी साम्राज्यवाद को नियंत्रित करने में विफल रहा क्योंकि उसे भय था कि उसके आदेशों का पालन नहीं किया जाएगा। इस प्रकार 1930 के दशक में होने वाले जापानी साम्राज्यवाद के लिए जापान की सेना उत्तरदायी थी। इसके अतिरिक्त, आर्थिक समस्याएं और जापान का छोटा भौगोलिक क्षेत्र जापानी साम्राज्यवाद की वृद्धि के लिए उत्तरदायी था।



24. साम्राज्यवादी संयुक्त राज्य अमेरिका



- 1865 से 1895 के दौरान संयुक्त राज्य अमेरिका का एक औद्योगिक शक्ति के रूप में उदय हुआ। इसके विशाल घरेलू बाजार के कारण कुछ समय तक अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में संयुक्त राज्य अमेरिका का प्रभाव महसूस नहीं किया गया। इस घरेलू बाजार के कारण इसका काफी अधिक उत्पादन आंतरिक रूप से उपभोग कर लिया जाता था। विशाल घरेलू बाजार का कारण 19वीं शताब्दी और 20वीं शताब्दी के प्रथम दशक में यूरोपीय और अन्य समूहों का बड़े पैमाने पर उत्प्रवास था, जिसके कारण संयुक्त राज्य अमेरिका की जनसंख्या में वृद्धि हुई। एक अन्य कारण अलगाव की नीति थी जिसके चलते यह विश्व मामलों में सामान्यतः कम रुचि लेता था।
- लेकिन 1890 के दशक तक अमेरिका एक नई साम्राज्यवादी शक्ति के रूप में उभरा। इसका मुख्य कारण यह था कि औद्योगिक क्रांति ने निर्यात बाजारों और कच्चे माल के लिए मांग प्रेरित की। अमेरिका ने भी श्वेत व्यक्ति के कर्धों पर बोझ (White Man's Burden) की अवधारणा का उपयोग किया और विश्व के विभिन्न देशों में अमेरिकी हस्तक्षेप के कारण के रूप में आधुनिक सभ्यता के प्रसार का तर्क दिया। प्रकृति के नियम के रूप में शक्तिशाली राष्ट्रों द्वारा निर्बलों पर प्रभुत्व का औचित्य सही ठहराया गया। प्रशांत क्षेत्र में अमेरिका का विस्तार काफी पहले ही आरंभ हो चुका था।

(*प्रशांत क्षेत्र में उपनिवेशवाद से संबंधित अध्याय देखें)

- 1890 के दशक में जब यूरोपीय देश चीन का बँटवारा करना चाहते थे तो ऐसी परिस्थिति में संयुक्त राज्य अमेरिका को लगा कि वह इस बंदरबांट में पीछे रह जाएगा। अतः उसने 'खुले द्वार की नीति' की घोषणा की। इसका निहितार्थ यह था कि चीन में सभी साम्राज्यवादी शक्तियों के समान अधिकार होंगे और कोई भी साम्राज्यवादी शक्ति किसी भी क्षेत्र को अपने प्रभाव क्षेत्र के रूप में उद्धृत करते हुए दूसरी

शक्ति के साथ भेदभाव नहीं करेगी। इस प्रकार चीन एक अंतर्राष्ट्रीय उपनिवेश बन गया। बॉक्सर विद्रोह (1899-1900) के दमन के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका की सेना भी यूरोपीय शक्तियों के साथ शामिल थी।



- 1893 में संयुक्त राज्य अमेरिका ने संपूर्ण अमेरिकी महाद्वीप पर अपने प्रभुत्व की घोषणा कर दी। उसने स्वयं को पूरे अमेरिका में व्यवहारिक रूप से संप्रभु घोषित कर दिया और कहा कि उसके आदेश को कानून माना जाना चाहिए। उसने ब्रिटेन को वेनेजुएला और ब्रिटिश गुयाना (वर्तमान गुयाना) के बीच के क्षेत्रीय विवाद में मध्यस्थता हेतु सहमत होने के लिए विवश कर दिया।
- अमेरिका चीन में रूसी वर्चस्व के विरुद्ध था। 1904-05 के रूस-जापान युद्ध में अमेरिकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने मध्यस्थता की और इस युद्ध में जापान ने जिन क्षेत्रों पर कब्जा कर लिया था उन पर उसके वर्चस्व को स्वीकार करने के लिए रूस को राजी किया। रूजवेल्ट ने जापान के साथ एक गुप्त समझौता भी किया जिसके फलस्वरूप अमेरिका को उस क्षेत्र में निर्बाध रूप से व्यापार करने की सुविधा मिल गई। इस प्रकार अमेरिका ने जापान के प्रति तुष्टीकरण की नीति आरंभ की। इसने जापान के साम्राज्यवाद को बढ़ावा दिया और जापान के लिए प्रशांत महासागर की प्रमुख शक्ति और अमेरिका का प्रतिद्वंद्वी बनना संभव बनाया।
- **मुनरो सिद्धांत का परिणाम:** 1904 में मुनरो सिद्धांत (1823) का विस्तार किया गया। रूजवेल्ट ने अब तर्क दिया कि अमेरिका को न केवल लैटिन अमेरिकी मामलों में यूरोपीय हस्तक्षेप का विरोध करने का अधिकार है बल्कि दक्षिणी अमेरिकी देशों के आंतरिक मामलों में भी हस्तक्षेप करने का अधिकार है। 1906-09 के दौरान अमेरिकी सैनिकों ने क्यूबा में 'कानून और व्यवस्था की पुनर्स्थापना' के लिए हस्तक्षेप किया।
- **कोलंबिया में पनामा नहर:** पनामा नहर 1914 में पूरी हुई। इससे अमेरिका के व्यापार को बड़े पैमाने पर बढ़ावा मिला। इस नहर ने प्रशांत और अटलांटिक महासागरों के बीच संपर्क संभव बनाया। पहले अमेरिका ने नहर का निर्माण कर रही फ्रांसीसी कंपनी के शेयर खरीदे। जब कोलंबियाई सरकार ने अमेरिका के साथ समझौते की शर्तों का विरोध किया, तो अमेरिका ने पनामा में एक क्रांति की साजिश रची और व्यवस्था बनाए रखने के नाम पर (लेकिन वास्तव में कोलंबिया को इस तथाकथित क्रांति को दबाने से रोकने के लिए) पनामा में अमेरिकी सैनिक भेज दिए। परिणामस्वरूप, शीघ्र ही पनामा को एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में मान्यता प्रदान कर दी गई। पनामा की नई सरकार ने अमेरिका के साथ पनामा नहर के बारे में एक समझौते पर हस्ताक्षर किए। इस समझौते की शर्तें अमेरिका के लिए उन शर्तों से भी अधिक अनुकूल थीं जो पिछले समझौते में कोलंबिया के सामने रखी गई थीं।
- **दक्षिण अमेरिका में नव-उपनिवेशवाद:** रूजवेल्ट के बाद आने वाले राष्ट्रपतियों, अर्थात्, विलियम हॉवर्ड टैफ्ट और वुड्रो विल्सन ने अमेरिकी कंपनियों द्वारा निवेश को बढ़ावा देने और इन निवेशों की सहायता से लैटिन अमेरिकी अर्थव्यवस्था को अपने नियंत्रण में लाने की नीति का पालन किया। अमेरिका ने लोकप्रिय रूप से निर्वाचित नेता मैट्रो (1910 में निर्वाचित, 1913 में हटाकर हत्या कर दी गई) के विरुद्ध तख्तापलट में सहायता करके मेक्सिको में हस्तक्षेप किया। इस घटना के बाद मेक्सिको निवासी अमेरिका के शत्रु बन गए (मेक्सिको 1821 में स्पेन से स्वतंत्र हुआ था)।

Copyright © by Vision IAS

All rights are reserved. No part of this document may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without prior permission of Vision IAS.